संवाद सेतु

मीडिया का आत्मावलोकन

अंक 25 पृष्ठ 24 जून, 2020 नई दिल्ली

संपादकीय

संपादक

आशुतोष भटनागर

कार्यकारी-संपादक

डॉ. जयप्रकाश सिंह

उप-संपादक

सूर्य प्रकाश

रविंद्र सिंह भड़वाल

डिजाइनिंग

राजीव पांडे

ई-मेल :

samvadsetu2011@gmail.com

फेसबुक पेज

@samvadsetu2011

अनुरोध

संवादसेतु की इस पहल पर आपकी टिप्पणी एवं सुझावों का स्वागत है। अपनी टिप्पणी एवं सुझाव कृपया उपरोक्त ई-मेल पर अवश्य भेजे।

'संवादसेतु' मीडिया सरोकारों से जुड़े पत्रकारों की रचनात्मक पहल है। 'संवादसेतु' अपने लेखकों तथा विषय की स्पष्टता के लिए इंटरनेट से ली गई सामग्री के रचनाकारों का भी आभार व्यक्त करता है। इसमें सभी पद अवैतनिक हैं।

अनुक्रम

आवरण कथा

बड़े बदलाव की दस्तक
(पृष्ठ 4-5-6-7)

आलेख

सच्चाई की मीडिया-लिंचिंग
(पृष्ठ 8-9-10)

ग्लोबल मीडिया

अल-जजीरा तेरे देश में
(पृष्ठ 11-12-13)

विमर्श

होना मेरे मैं सा
(पृष्ठ 14-15-16)

लोक संवाद

कोरोना काल में उत्सवधर्मी समाज का लोकसंवाद
(पृष्ठ 17-18)

जम्मू-कश्मीर

मौसम-समाचार का नया हथियार
(पृष्ठ 19)

शब्दावली

मिलेनियल्स
(पृष्ठ 20-21

आलेख

खतरे की घंटी है टिकटॉक की फैंटेसी
(पृष्ठ 22-23)

समाज-संवाद

सही सूचनाओं का आरोग्य सेतु
(पृष्ठ 24)

पत्रकारिता में भी ऐसी ही अंधी दौड़ चल रही थी। इस दौड़ में पत्रकारीय मूल्यों पर समझौता किया। खबरों के नाम पर क्या नहीं दिखाया। भूत-प्रेत, चुड़ैल, स्वर्ग की सीढ़ी, रावण का सिंहासन, टूटते-बिखरते, कलंकित होते रिश्ते और न जाने क्या-क्या। अंततः पता चला कि टीआरपी अभी भी रामायण और महाभारत में है। छोटे और बड़े पर्दे पर इतना अंधेरा परोसने के बाद भी कथित `जेनएक्स' और `मिलेनियल्स' रामराज्य के आकर्षण में झूल रहे हैं...

कोरोना का संकट दुनिया में बड़े बदलाव लेकर आया है। आंख मूंदे और मुठ्ठियां भींचे अंधाधुंध दौड़ रहे लोग यकायक ठहर गए। अब वे भौचक होकर सोच रहे हैं कि दौड़े बहुत, लेकिन पहुंचे कहीं नहीं। अपना परिवेश छोड़ आए। नए में ढल नहीं सके। जहां हैं वहां होना न उन्हें मंजूर है और न उन्हें जिनके बीच वे आज हैं।

पत्रकारिता में भी ऐसी ही अंधी दौड़ चल रही थी। इस दौड़ में पत्रकारीय मूल्यों पर समझौता किया। खबरों के नाम पर क्या नहीं दिखाया। भूत-प्रेत, चुड़ैल, स्वर्ग की सीढ़ी, रावण का सिंहासन, टूटते-बिखरते, कलंकित होते रिश्ते और न जाने क्या-क्या। अंततः पता चला कि टीआरपी अभी भी रामायण और महाभारत में है। छोटे और बड़े पर्दे पर इतना अंधेरा परोसने के बाद भी कथित 'जेनएक्स' और 'मिलेनियल्स' रामराज्य के आकर्षण में झूल रहे हैं। फिर यह दो दशकों की अंधी दौड़ आखिर क्या थी? किसके लिए थी?

22 मार्च को प्रधानमंत्री मोदी के आह्वान पर कोरोना योद्धाओं के लिए तालियां बजाई गईं। खिड़की और रेलिंग से लटके लोगों ने जिनके लिए तालियां बजाईं उनमें मीडियाकर्मी भी शामिल थे, लेकिन जब अपने कर्त्तव्य की पूर्ति करते हुए वे संक्रमित होने लगे तो उनकी सुध लेने वाला कोई नहीं था। छोटे अखबारों और पत्रिकाओं में काम करने वाले पत्रकारों की स्थिति तो उन दिहाड़ी मजदूरों से भी गई-बीती थी जिनके लिए न नौकरी थी और न 'मनरेगा'।

'मिशनरी' पत्रकार मोदी की नाकामयाबी का ढिंढोरा पीटते सूनी सड़कों पर बढ़ चले। रास्ते में पैदल अपने घरों की ओर कदम बढ़ा रहे गरीबों की मजबूरी उनके फोकस में थी। उनके अनुसार यह गरीब क्रूर बाजार और बर्बर शहरी मानसिकता के शिकार नहीं बल्कि मोदी के नाकारापन के प्रतीक हैं। यह लोग बाजार या शहरी मानसिकता, जिसने इनके दम पर करोड़ों-अरबों कमाए और महीने भर के लॉकडाउन में उनको पेटभर रोटी देने से हाथ खड़े कर दिए, को इसका आरोपी नहीं ठहरा सकते क्योंकि वे खुद इसका हिस्सा हैं। इनके अपने संस्थानों में काम कर रहे जूनियर पत्रकार और स्टिंगर भी इसी तरह सड़कों पर हैं । एन.यू.जे. के कार्यालय पर कोरोना जांच, दवाइयों और राशन किट के लिए गुहार लगाने वाले नवोदित पत्रकार इन 'एक्टिविस्ट' पत्रकारों की संवेदना जीत पाने में असफल रहे।

यह साबित होना बाकी है कि कोविड-19 वायरस फैला या जानबूझ कर फैलाया गया, लेकिन यह तो सिद्ध ही है कि इसके विकराल रूप धारण करने के पीछे चीन की भूमिका नकारी नहीं जा सकती, जिसने पहले इसकी गंभीरता को छिपाने की कोशिश की और फिर अपने यहां इससे मरने वालों का आंकड़ा भी छिपाया। किन्तु दिल्ली में मीडिया में मौजूद उसके मददगार ऐसी परिस्थिति में भी उसके बचाव के लिए सामने आए। इसके पीछे दबाव था या प्रलोभन, अथवा वे सिर्फ मोदी विरोध के लिए चीन का समर्थन कर रहे हैं, इसकी पड़ताल जरूरी है।

आपका संपादक

आशुतोष भटनागर

चित्र : गूगल-ईमेज से साभार

बड़े बदलाव की दस्तक

यह सही है कि ऑनलाइन मीडिया में काम करने वाले पत्रकार लॉकडाउन से उतने प्रभावित नहीं हुए, परन्तु प्रिंट और टेलीविजन पत्रकारों के सामने नौकरी का गंभीर संकट उत्पन्न हो गया है। जो पत्रकार स्वतंत्र लेखन करके अपना जीवन-यापन करते रहे हैं अथवा छोटे समाचार पत्र-पत्रिकाओं में काम करते थे उनकी स्थिति बहुत दयनीय हो चली है...

❐ डॉ. प्रमोद कुमार

कोरोना महामारी के कारण उत्पन्न हालात में भारतीय मीडिया ऐसे बड़े बदलाव के मुहाने पर पहुंच गया है जहां मीडिया मालिकों, मीडियाकर्मियों और पाठकों/श्रोताओं सहित 'न्यूजमेकर्स' को भी अपनी आदतें बदलनी पड़ रही हैं। परन्तु यह तो बदलाव की दस्तक भर है। आने वाले दिनों में मीडिया का स्वरूप और भी नए रंगों में नजर आएगा। इसलिए और भी बड़े बदलाव की तैयारी अभी से प्रारंभ कर लीजिए।

भारतीय मीडियाकर्मियों के लिए कोरोना वायरस के कारण लागू घरवास (लॉकडाउन) एक भयावह सपना सिद्ध हुआ है। उनकी हालत बेघर हुए लाखों प्रवासी मजदूरों से भी बदतर है। यह सही है कि ऑनलाइन मीडिया में काम करने वाले पत्रकार लॉकडाउन से उतने प्रभावित नहीं हुए, परन्तु प्रिंट और टेलीविजन पत्रकारों के सामने नौकरी का गंभीर संकट उत्पन्न हो गया है। जो पत्रकार स्वतंत्र लेखन करके अपना जीवन-यापन करते रहे हैं अथवा छोटे समाचार पत्र-पत्रिकाओं में काम करते थे

उनकी स्थिति बहुत दयनीय हो चली है। हालत यह है कि पत्रकारों के प्रमुख संगठन, दिल्ली पत्रकार संघ, के पास राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली में बड़ी संख्या में मीडियाकर्मियों ने लॉकडाउन के दौरान राशन आदि के रूप में मदद की गुहार लगाई और दिल्ली पत्रकार संघ ने महज अप्रैल माह में ही कई सौ पत्रकारों की विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से सहायता कराई। संकट में फंसे हर व्यक्ति की आवाज बुलंद करने वाले पत्रकारों की यह हालत होगी, यह किसी ने नहीं सोचा था। सरकार ने मजदूरों, किसानों आदि के लिए राहत पैकेज घोषित किए हैं, परन्तु कोरोना योद्धा के रूप में अग्रिम मोर्चे पर डटकर काम करते हुए इस खतरनाक वायरस की चपेट में आ चुके पत्रकारों की सुध किसी ने नहीं ली। बहुत से स्वाभिमानी पत्रकार आज भी किसी के सामने मदद हेतु हाथ फैलाने के लिए तैयार नहीं हैं, परन्तु प्रश्न यह है कि आखिर कब तक वे ऐसा नहीं करेंगे, क्योंकि संकट के अभी समाप्त होने के कोई आसार नजर नहीं आ रहे हैं।

देशभर में पत्रकार भी हैं संक्रमित:

महामारी के दौरान अग्रिम मोर्चे पर रहकर काम कर रहे हैं अनेक पत्रकार देशभर में इस खतरनाक वायरस की चपेट में आ चुके हैं। मुंबई के 'टीवी9 मराठी चैनल' के आईटी विभाग में कार्यरत रोशन डायस की तो 22 मई को इस वायरस के कारण मृत्यु हो गई। रोशन पहले 'स्टार न्यूज' में भी काम कर चुके हैं। रोशन का अप्रैल में कोरोना टेस्ट हुआ था। उस टेस्ट में करीब 53 मीडियाकर्मी कोरोना पॉजिटिव मिले थे। उसी में रोशन भी एक था। उसे आइसोलेशन वार्ड में क्वारंटाइन किया गया था। हालत बिगड़ने पर उसे आईसीयू में भर्ती किया गया, जहां उसने 22 मई को दम तोड़ दिया। 46 वर्षीय रोशन के परिवार में पत्नी और दो बच्चे हैं। इधर, राजधानी दिल्ली में ज़ी न्यूज के पत्रकारों के कोरोना की चपेट में आने की खबर है। इसके अलावा भी कुछ और मीडिया हाउसों ने कोरोना पॉजिटिव मामलों की सूचना दी है। इंडिया न्यूज नेटवर्क में आउटपुट टीम की एक महिला कर्मचारी कोरोना पॉजिटिव पाई गई है।

संकट की इस घड़ी में जब लोग समाचारपत्र और पत्रिकाओं को भी वायरस फैलने का एक माध्यम मानकर उन्हें खरीदने में संकोच कर रहे हैं, ऐसे में डिजिटल तकनीक ने लोगों की नवीन समाचारों की भूख को शांत किया है। हालांकि महामारी के कारण 'वर्क फ्रॉम होम' की यह परम्परा लॉकडाउन के बाद कितने दिन जारी रहेगी यह कहना अभी मुश्किल है, परंतु बेहतर होगा कि मीडिया संस्थान इसे अपनी आदत में शामिल कर इसे नए 'वर्क कल्चर' के रूप में स्वीकार करें...

छोटे प्रकाशन बंद:

इस संकट का एक और पहलू है। लॉकडाउन के कारण हजारों की संख्या में छोटे समाचारपत्रों का देशभर में प्रकाशन बंद हो गया है। यहां तक कि नामचीन पत्र-पत्रिकाएं सिर्फ डिजिटल संस्करण प्रकाशित करने के लिए बाध्य है। 'पांचजन्य' और 'आर्गनाइजर' जैसी प्रतिष्ठित पत्रिकाएं भी सम्पूर्ण लॉकडाउन की अवधि में सिर्फ डिजिटल संस्करण ही अपनी वेबसाइट पर अपलोड कर रही हैं। हालांकि यह बात अलग है कि लॉकडाउन की इस अवधि में इसके डिजिटल पाठकों की संख्या में कई गुणा वृद्धि हुई है। यदि ये पत्रिकाएं इन डिजिटल पाठकों को अपने नियमित ग्राहकों में तबदील कर लें तो यह उनकी बड़ी कामयाबी मानी जाएगी। यही सवाल अन्य पत्र.पत्रिकाओं के लिए भी है।

'वर्क फ्रॉम होम' स्थायी 'ट्रेन्ड'

लॉकडाउन के दौरान मीडिया में 'वर्क फ्रॉम होम' को बिना झिझक स्वीकार्यता मिली है। यहां तक कि देश की 'पीटीआई' जैसी बड़ी न्यूज एजेंसी का पूरा स्टाफ घर से ही काम कर रहा है। हालांकि, वर्ष 2015 से मेरे जैसे कुछ लोग मीडिया में 'वर्क फ्रॉम होम' की बात उठाते रहे हैं। परन्तु बड़ी संख्या में मीडिया नियंता हमारे सुझाव पर हंसते थे। परन्तु अब 'वर्क फ्रॉम होम' ने ही न केवल मीडिया संस्थानों का अस्तित्व बचाया, बल्कि मीडियाकर्मियों की नौकरी भी बचाई। संकट की इस घड़ी में जब लोग समाचारपत्र और पत्रिकाओं को भी वायरस फैलने का एक माध्यम मानकर उन्हें खरीदने में संकोच कर रहे हैं, ऐसे में डिजिटल तकनीक ने लोगों की नवीन समाचारों की भूख को शांत किया है। हालांकि महामारी के कारण 'वर्क फ्रॉम होम' की यह परम्परा लॉकडाउन के बाद कितने दिन जारी रहेगी यह कहना अभी मुश्किल है, परंतु बेहतर होगा कि मीडिया संस्थान इसे अपनी आदत में शामिल कर इसे नए 'वर्क कल्चर' के रूप में स्वीकार करें। सोशल मीडिया कंपनी 'फेसबुक' के सीईओ मार्क जुकरबर्ग ने 25 मई, 2020 को घोषणा की कि वर्ष 2030 तक उसके करीब आधे कर्मचारी अपने घरों से काम करने लगेंगे। कंपनी ने यहां तक कहा है

कि वह सभी कर्मचारियों को स्थायी रूप से घर से ही काम करने की अनुमती देने की तैयारी कर रही है। फेसबुक अपने कर्मचारियों को यह विकल्प चुनने का ऑफर देने की तैयारी में है कि वे स्वयं तय करें कि वे कहां से बेहतर काम कर सकते हैं। इस दिशा में उनका तकनीकी विभाग इसे अमलीजामा पहनाने के लिए काम कर रहा है। 'गूगल' ने अपने कर्मचारियों को इस पूरे साल घर से काम करने की छूट दे दी है।

चित्र : गूगल-ईमेज से साभार

मनोरंजन की दृष्टि से दशकों बाद 'दूरदर्शन' की 'व्युअरशिप' में उछाल आया है। 'रामायण' और 'महाभारत' सहित पुराने धारावाहिकों को एक बार फिर बहुत पसंद किया गया। डिजिटल मीडिया में समाचार वेबसाइट्स को 35 से 50 प्रतिशत तक अधिक रीडरशिप मिली है...

'अमेजॉन' और 'माइक्रोसॉफ्ट' ने भी इस साल कम से कम अक्तूबर तक घर से काम करने की अनुमति दे दी है। इसके अलावा सभी बड़ी कंपनियां सिर्फ तकनीक की मदद से घर से काम करके ही अपना व्यवसाय बचाकर अपने कर्मचारियों को समय पर वेतन देने का प्रयास कर रही हैं। इसलिए माना जा सकता है कि महामारी के बाद घर से काम करना एक स्थायी 'ट्रेंड' बनने जा रहा है।

मीडिया में डिजिटल बूम:

कोरोना महामारी के दौरान जहां प्रिंट के प्रसार में जबरदस्त कमी देखने को मिली है, वहीं टेलीविजन और डिजिटल की 'व्युअरशिप' में अप्रत्याशित उछाल आया है। टेलीविजन की बात करें तो आम मनोरंजन के कार्यक्रमों की तुलना में समाचारों की 'व्युअरशिप' भी काफी बढ़ी है। मनोरंजन की दृष्टि से दशकों बाद 'दूरदर्शन' की 'व्युअरशिप' में उछाल आया है। 'रामायण' और 'महाभारत' सहित पुराने धारावाहिकों को एक बार फिर बहुत पसंद किया गया। डिजिटल मीडिया में समाचार वेबसाइट्स को 35 से 50 प्रतिशत तक अधिक रीडरशिप मिली है। इसमें भी मोबाइल पर खबरें पढ़ने वालों की संख्या बढ़ी है। यह इस बात का संकेत है कि आने वाले समय में डिजिटल में अपार संभावनाएं हैं। अभी तक जो लोग आदतन छपा हुआ अखबार पढ़ने के आदी थे वे भी अब मोबाइल पर खबरें पढ़ने की आदत डाल रहे हैं। इसलिए जो मीडिया हाउस डिजिटल-केन्द्रित रणनीति बनाएगा वह आगे जाएगा। अभी डिजिटल के साथ सबसे बड़ा प्रश्न रेवेन्यू का है। इसलिए मीडिया के समक्ष बड़ी चुनौती यह है कि डिजिटल से 'रेवेन्यू जनरेशन' कैसे हो, इसके लिए सिर्फ मीडिया घरानों को ही नहीं, बल्कि पाठकों को भी बदलना पड़ेगा। जितना पैसा वे हर माह अखबार के हॉकर को देते हैं उतना नहीं तो उससे कम पैसा देकर उन्हें डिजिटल संस्करण पढ़ने के लिए देने की आदत डालनी होगी। कुछ समाचार पत्रों ने डिजिटल में 'सबस्क्रिप्शन मॉडल' शुरू किए हैं। पहले जिन बड़े अखबारों ने इस मॉडल को नहीं अपनाया था अब वे भी 'पेवॉल' के बारे में सोचने को मजबूर हैं।

संकट के इस दौर में डिजिटल को इसलिए भी नया पाठक वर्ग मिला है क्योंकि हर कोई पल-पल की नवीन जानकारी चाहता है। सभी को चिंता है कि कब क्या हो जाए पता नहीं। कहीं उनकी ही बिल्डिंग में या आसपास कोरोना का कोई नया मामला तो नहीं निकल आया। जो नए रेड जोन जारी हो रहे हैं वे कौन-कौन से हैं, नई गाइडलाइंस जारी हो रही हैं। कोई नई अधिसूचना आ रही है, वॉट्सएप पर इससे जुड़ी तमाम खबरें आ रही हैं।

इन सभी चीजों ने डिजिटल को और मजबूत किया है। लोगों को यह समझ में आ गया है कि उन्हें यदि किसी खबर के बारे में अपडेट चाहिए तो उन्हें डिजिटल से जुड़ना पड़ेगा और यदि खबर का सार चाहिए या किसी खबर का महत्वपूर्ण हिस्सा पढ़ना है या किसी खबर के बारे में 400-500 या हजार शब्दों में जानकारी चाहिए तो अगले दिन अखबार में ही मिलेगी। इसलिए समाचार पत्र का डिजिटल संस्करण भी चाहिए।

डिजिटल तीनों माध्यमों का समागम है, जहां पाठकों को टेक्स्ट, ऑडियो और विडियो सभी मिल जाते हैं। यह सुविधा अखबारों में नहीं मिलती।

चौंकाने वाले गैजेट्स की दस्तक:

गूगल-प्रेस एसोशिएसन के संयुक्त प्रयास से 2017 में प्रारंभ 'रडार प्रोजेक्ट' ने अमेरिकी और ब्रिटिश मीडिया में दो साल से खलबली मचा रखी है। सरकारी डाटा पर आधारित खबरें तैयार करने में यह प्रोजेक्ट काफी उपयोगी सिद्ध हुआ है। इसके अलावा चीन में टेलीविजन समाचार वाचन के लिए रोबोट एंकर के प्रयोग तीन साल से जारी हैं। हाल ही में चीन ने विश्व की पहली 3डी न्यूज एंकर को लांच किया। यह आधुनिक तकनीक से युक्त एक रोबोट है। चीन की सरकारी न्यूज एजेंसी 'शिन्हुआ' और एक अन्य एजेंसी ने मिलकर इसे बनाया है।

यह 3डी न्यूज एंकर आसानी से घूम सकती है और जैसी खबर होती है उसके चेहरे के हावभाव भी वैसे ही बदल जाते हैं। ये अपने सिर के बालों और ड्रेस में भी परिवर्तन कर सकती है। अभी यह एक महिला की आवाज में ही न्यूज पढ़ती है मगर इसमें एक खास बात ये है कि यह किसी भी व्यक्ति की आवाज की नकल कर सकती है। यानि यदि आप अमिताभ बच्चन की आवाज में समाचार वाचन चाहते हैं तो आने वाले समय में वह भी संभव हो सकेगा। इसलिए संभव है कि आने वाले समय में ऐसे 3डी न्यूज एंकर ही चैनलों पर समाचार वाचन करते हुए नजर आएं। इससे पहले चीन ने 2018 में 'क्यू हाउ' नाम से डिजिटल एंकर का प्रयोग किया था। उसे मशीन लर्निंग तकनीक के जरिए आवाज की नकल करने के योग्य बनाया गया था। 'शिन्हुआ' का दावा है कि आने वाले कुछ दिनों में रोबोट एंकर स्टूडियो के बाहर भी समाचार पढ़ते हुए देखे जा सकेंगे। यानि अभी कुछ चैनलों के एंकर स्टूडियो के बाहर एंकरिंग करते हुए दिखते हैं मगर आने वाले समय में इसमें रोबोट का भी इस्तेमाल हो सकेगा। हो सकता है कि टीवी की दुनिया में ऐसे रोबोट एंकर ही प्राइम टाइम में खबरें पढ़ते हुए दिखाई दें।

इस बात की पूरी संभावना है कि आने वाले दिनों में प्रिंट भी किसी गैजेट में सिमट जाए। पाठकों को रूमाल जैसे गैजेट थमा दिए जाएंगे। जब मन चाहा जेब से निकालकर खबर पढ़ ली और फिर मोडकर जेब में रख लिया। एक बदलाव यह होगा कि प्रिंट अब चौबीस घंटे में एक बार नहीं, बल्कि हर पल उस गैजेट के माध्यम से नवीन खबरें अपडेट करता रहेगा। इसलिए समाचार पत्र-पत्रिकाओं के स्वरूप में बड़ा बदलाव आना लाजिमी है। नए गैजेट्स में सिमटने वाली पत्रिकाएं अब टैक्स्ट, ऑडियो और वीडियो का सम्मिश्रण उसी प्रकार प्रस्तुत करें जैसा कुछ साल पहले `हैरी पॉटर' फिल्म और दूसरे कुछ `साइंस फिक्शन्स' में देखा गया।

भविष्य के अखबार :

कोरोना महामारी के कारण जो माहौल बनता नजर आ रहा है उसमें यदि आने वाले दिनों में बहुमंजिले मीडिया हाउस महज एक कक्ष में सिमट जाएं तो आश्चर्य नहीं होना चाहिए। हो सकता है कि मीडिया हाउस अपने वर्तमान बहुमंजिले भवनों को किराए पर उठाकर उनसे पैसे कमाएं क्योंकि 'वर्क फ्रॉम होम' के कारण जब स्टाफ ही ऑफिस नहीं आएगा तो उन्हें विशाल भवनों की जरूरत नहीं होगी। इस बात की पूरी संभावना है कि आने वाले दिनों में प्रिंट भी किसी गैजेट में सिमट जाए। पाठकों को रूमाल जैसे गैजेट थमा दिए जाएंगे। जब मन चाहा जेब से निकालकर खबर पढ़ ली और फिर मोडकर जेब में रख लिया।

एक बदलाव यह होगा कि प्रिंट अब चौबीस घंटे में एक बार नहीं, बल्कि हर पल उस गैजेट के माध्यम से नवीन खबरें अपडेट करता रहेगा। इसलिए समाचार पत्र-पत्रिकाओं के स्वरूप में बड़ा बदलाव आना लाजिमी है। नए गैजेट्स में सिमटने वाली पत्रिकाएं अब टैक्स्ट, ऑडियो और वीडियो का सम्मिश्रण उसी प्रकार प्रस्तुत करें जैसा कुछ साल पहले 'हैरी पॉटर' फिल्म और दूसरे कुछ 'साइंस फिक्शन्स' में देखा गया।

कुल मिलाकर अब मीडिया मालिकों को ही नहीं, बल्कि मीडिया में काम करने वाले मीडियाकर्मियों, पाठकों और देश के नीति-निर्माताओं सभी को नए ढंग से सोचना होगा। जो इस बदलाव के लिए तैयार होंगे वे टिकेंगे जो नहीं बदलेंगे वे इतिहास का अध्याय बन जाएंगे।

— लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं

चित्र : गूगल-ईमेज से साभार

सच्चाई की मीडिया-लिंचिंग

❒ डॉ. जयप्रकाश सिंह

भारतीय मीडिया में यकायक सम्प्रदाय सबसे बड़ा 'समाचार-मूल्य' बन गया है। समाचार के चयन और महत्व का निर्धारण धड़ल्ले से साम्प्रदायिक आधार पर हो रहा है। किसी एक सम्प्रदाय से जुड़ी घटना मानवता का मुद्दा बन जाती है, सच की लड़ाई बन जाती है, अत्याचार की कहानी बन जाती है। लेकिन किसी अन्य सम्प्रदाय से जुड़ी वैसी ही घटना खबर बनने के लिए तरस जाती है, मीडिया भयानक चुप्पी साध लेता है।

अपराधी को कानून के कठघरे में लाए बिना यदि भीड़ न्याय करने में उतारू हो जाए तो मॉब लिंचिग होती है। यदि सच का सुविधा और स्वार्थ के अनुसार किया चुनाव किया जाने लगे तो मीडिया लिंचिंग हो जाती है। एक में व्यक्ति की मौत होती है, दूसरे में सच दम तोड़ता है। हाल ही में जब पालघर में दो साधुओं की पीट-पीटकर हत्या कर दी गई या असम में सब्जी बेचने वाले सनातन डेका मॉब लिचिंग का शिकार बने तो उनकी पहचान के साथ जिस तरह से खिलवाड़ किया गया, उससे मीडिया की साम्प्रदायिक आधार पर कवरेज करने का प्रश्न फिर से चर्चा का विषय बना। पालघर में तो साधुओं को मीडिया ने शुरुआती दौर में चोर बता दिया।

यदि पीछे भी नजर डालें तो इतिहास की सर्वाधिक अमानवीय, क्रूर और वीभत्स

11 मई 2019 को दिल्ली के बसई दारापुर में ध्रुव त्यागी के ऊपर इसलिए पत्थर बरसाए गए, पीटा गया और अंततः चाकुओं से गोद कर हत्या कर दी क्योंकि उन्होंने अपनी आंखों के सामने अपनी बेटी के साथ हो रही छेड़खानी का विरोध किया था। इस घटना में अपने पिता को बचाने आया अनमोल त्यागी भी बुरी तरह जख्मी हो गया...

मॉब लिंचिंग की घटना मधु चिंदक्की की हत्या को माना जा सकता है। 22 फरवरी 2018 को जनजातीय समाज से ताल्लुक रखने वाले मधु चिंदक्की की हत्या कुछ मुट्ठी चावल चुराने के आरोप में कर दी गई थी। 27 वर्षीय मधु को बांधकर भीड़ ने इतनी बुरी तरह पीटा कि अस्पताल जाते समय उनकी मौत हो गई। अमानवीयता की हद यह थी कि कुछ लोग पिटाई के दौरान मानसिक रूप से विकलांग मधु के साथ सेल्फी ले रहे थे।

मॉब लिंचिंग की इस घटना को एक समुदाय विशेष के द्वारा अंजाम दिया गया था। चार्जशीट के अनुसार एम. हुसैन, पी. सम्सुद्दीन, वी. नजीब, के सिद्दीक, और पी. अबूबकर मुख्य अभियुक्तों की सूची में शामिल हैं। मीडिया में मॉब लिंचिग के दौर पंथ और सम्प्रदाय ढूंढने की जो व्यग्रता रहती है, वह भीड़ द्वारा मधु चिंदक्की की हत्या मामले से पूरी तरह गायब है।

18 मई 2019 को मथुरा के चौक बाजार में दुकानदार भारत यादव की एक भीड़ पीट-पीटकर हत्या कर देती है। उनका गुनाह केवल इतना था कि उन्होंने अपनी दुकान पर लस्सी पीने वाले कुछ लोगों से उसकी कीमत मांग ली थी। भारत यादव की उम्र 26 वर्ष थी। भारत यादव के भाई पंकज यादव हनीफ और शाहरुख को इस घटना के लिए दोषी ठहराते हैं। उनके अनुसार एक बुर्के वाली औरत ने भी भीड़ को उकसाया। पंकज के अनुसार भीड़ उनके भाई को काफिर कह-कह कर पीट रही थी। इस घटना पर मीडिया ने आपराधिक मौन धारण कर लिया। हिन्दी के अखबारों में तो यह इस घटना की थोड़ी बहुत कवरेज हुई भी। अंग्रेजी अखबारों से यह खबर लगभग पूरी तरह से गायब रही। इक्का-दुक्का अखबारों ने कवर किया भी तो वह बताने से अधिक छिपाने के अंदाज में किया। 11 मई 2019 को

चित्र : गूगल-ईमेज से साभार

दिल्ली के बसई दारापुर में ध्रुव त्यागी के ऊपर इसलिए पत्थर बरसाए गए, पीटा गया और अंतत: चाकुओं से गोद कर हत्या कर दी क्योंकि उन्होंने अपनी आंखों के सामने अपनी बेटी के साथ हो रही छेड़खानी का विरोध किया था। इस घटना में अपने पिता को बचाने आया अनमोल त्यागी भी बुरी तरह जख्मी हो गया।

इन तीन मामलों को मीडिया के पूर्वाग्रह और साम्प्रदायिक दृष्टिकोण को समझने के लिए केस स्टडी के रूप में लिया जा सकता है। इन सभी मामलों में मीडिया ने समुदाय का नाम नहीं लिया। इन्हें कानून और व्यवस्था का मामला माना। और 'कथित' शब्द का इस हद तक प्रयोग किया गया कि घटना की वास्तविकता के बारे में संदेह पैदा होने लगे।

तर्क यह दिया जा सकता है कि मीडिया नैतिकता के लिहाज से यह ठीक है। हां, इस तर्क को स्वीकार किया जा सकता है, किया जाना चाहिए। लेकिन जब तस्वीर का दूसरा पहलू देखते हैं कि तो आसानी से यह समझ में आ जाता है कि मामला इतना सीधा नहीं है।

यदि आज एक सामान्य आदमी मीडिया लिंचिंग के मामलों को रिकॉल करने की कोशिश करता है तो उसे तीन घटनाएं याद आती है मोहम्मद अखलाक, पहलू खान और तबरेज अंसारी। आप दिमाग पर जोर देंगे तो यह तथ्य भी उभरेगी कि इन तीनों मामलों की छवि इस कदर आपके दिमाग में गढ़ी गई है मानो यह कानून व्यवस्था का मसला न हो। एक हिंसक, क्रूर और बहुसंख्यक समुदाय का एक अल्पसंख्यक और समुदाय पर किया गया हमला है। इसका कारण बहुत स्पष्ट है मीडिया में इन घटनाओं की कवरेज कानून-व्यवस्था के प्रश्न के रूप में नहीं हुई। बल्कि एक बर्बर और बलवान समुदाय द्वारा शांतिप्रिय और निर्बल समुदाय पर हमले के रूप में की गई। इन हत्याओं का उपयोग राजनीतिक और सभ्यतागत आख्यान गढ़ने के लिए या उन्हें मजबूत बनाने के लिए किया गया। भारतीय मीडिया के लिए हिंदुओं पर हुए हमले व्यक्तिगत हो जाते हैं, कानून-व्यवस्था का प्रश्न बन जाते हैं, शांति-अपील के फुटनोट उनके साथ नत्थी कर दिए जाते हैं। मुसलमानों पर होने वाले हमले सामुदायिक हो जाते हैं, साम्प्रदायिक हो जाते हैं और उसमें आक्रोश को हवा-पानी दिया जाता है।

दूसरी तरफ हिन्दुओं से जुड़ी हुई पुख्ता खबरों को भी या तो कवर नहीं किया जाता है या शीर्षक में सम्बोधन लगाकर उन्हें संदेहास्पद बना दिया जाता है। केरल में महिला पुलिस कर्मी को दूसरे समुदाय के पुलिसकर्मी ने जिंदा जला दिया। कुछ अखबारों ने शीर्षक में इसे मानसिक असंतुलन से जोड़कर प्रस्तुत किया...

इससे भी आगे जाने वाला पूर्वाग्रह यह है कि मीडिया एक समुदाय के आरोपों को बिना छानबीन के ही अंतिम मान ले रहा है और उन्हें प्रचारित-प्रसारित कर रहा है।

गुरुग्राम में एक व्यक्ति ने यह आरोप लगाए कि दूसरे लोगों ने पीटा, टोपी उतरवाई, जय श्रीराम के नारे लगवाए। मीडिया ने इस खबर को हाथोंहाथ लिया। हैदराबाद से भी जबरन जय श्रीराम के नारे लगवाने की खबर आई, खबर पूरी तरह फर्जी पाई गई। पश्चिम बंगाल में एक मुस्लिम दूसरे मुस्लिम से जयश्रीराम के नारे पर लगवा रहा था। पेश ऐसे किया गया मानो हिन्दू मुसलमानों से जय श्रीराम के नारे लगवा रहे हों।

दूसरी तरफ हिन्दुओं से जुड़ी हुई पुख्ता खबरों को भी या तो कवर नहीं किया जाता है या शीर्षक में सम्बोधन लगाकर उन्हें संदेहास्पद बना दिया जाता है। केरल में महिला पुलिस कर्मी को दूसरे समुदाय के पुलिसकर्मी ने जिंदा जला दिया। कुछ अखबारों ने शीर्षक में इसे मानसिक असंतुलन से जोड़कर प्रस्तुत किया। दिल्ली में एक दुकान पर समुदाय विशेष के अपराधी ने तोड़फोड़ किया, इस घटना को ऐसे पेश किया गया मानो दिल्लीवासी ने किसी मुंबईवासी से पर हमला कर दिया हो।

इस नई प्रवृत्ति के कारण भारतीय मीडिया की रही-सही विश्वसनीयता भी खत्म हो रही है। यह समाज में वैमनस्य और घृणा के नए बीज भी बो रही है। दिल्ली के चावड़ी बाजार के गली दुर्गा मंदिर पर हुए हमले के तमाम कारणों में से एक कारण यह भी था कि वहां पर एक समुदाय विशेष के व्यक्ति की मॉब लिंचिंग का अफवाह उड़ी। एक समुदाय ने इस अफवाह का उपयोग मंदिर पर हमला करने के लिए किया।

मॉब लिंचिग की झूठी और एकतरफा खबरें घृणा के व्यापार को आधार प्रदान कर रही है। मॉब लिंचिंग कानून व्यवस्था का प्रश्न है और इससे निपटा ही जाना चाहिए। लेकिन सच की जिस तरह से मीडिया लिंचिंग की जा रही है, वह तो देश की सामूहिक चेतना के साथ खिलवाड़ है। उसे कैसे रोका जाए।

सच के पक्ष में खड़े होकर, सच को मुखर करके ही ऐसा किया जा सकता है। मीडिया-लिंचिंग अभी शैशवास्था में है, यही इसके प्रतिकार का उचित समय है। अन्यथा झूठ का बाजार और अफवाहबाजी का तंत्र निर्णायक भूमिका में आ जाएंगे।

— लेखक वरिष्ठ पत्रकार व मीडिया विश्लेषक हैं।

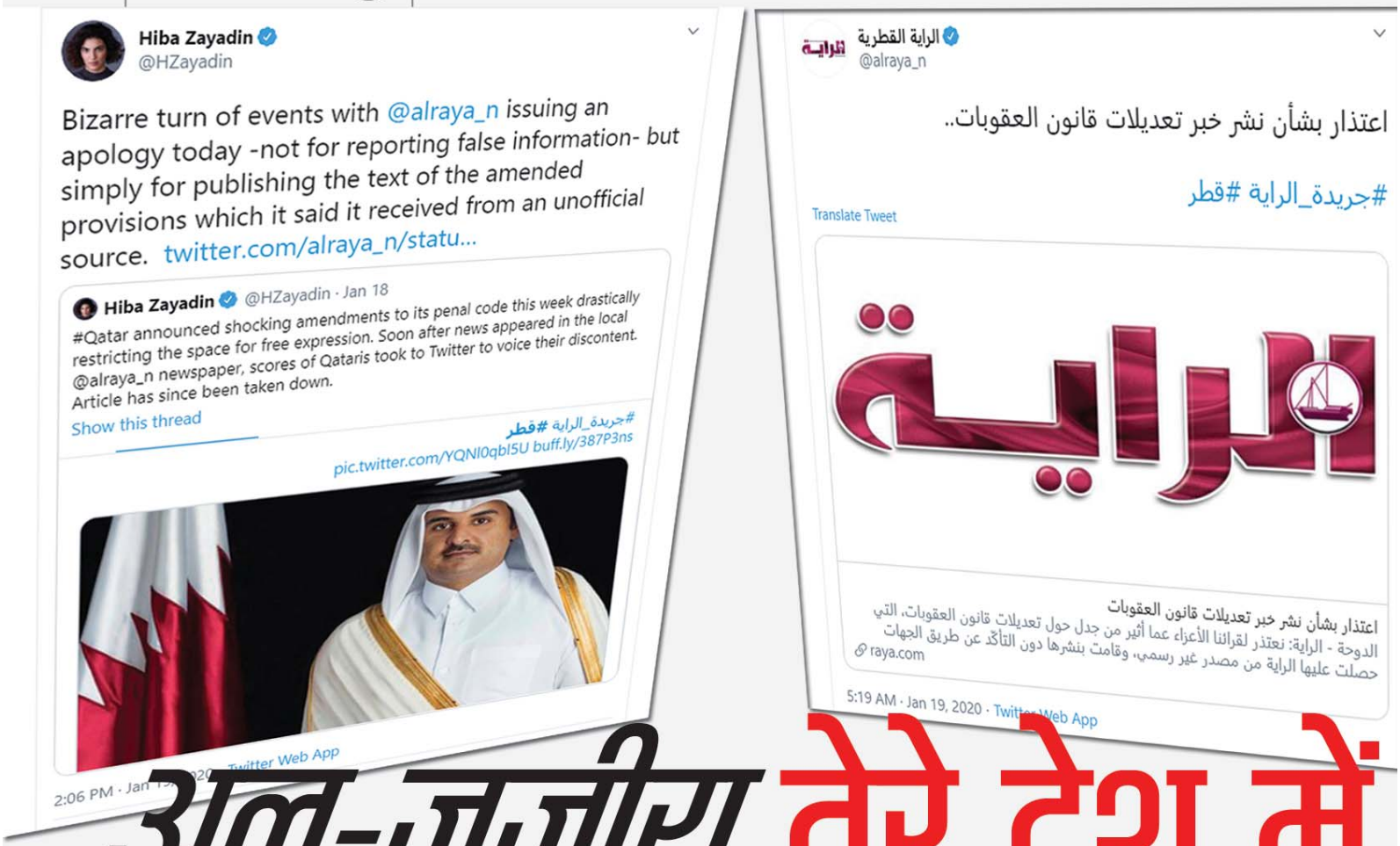

अल-जजीरा तेरे देश में

❒ जयेश मटियाल

अल-जजीरा भारत में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, मीडिया की स्थिति और अल्पसंख्यकों की हालत को लेकर खासा चिंतित रहता है, लेकिन उसके अपने देश में इन मुद्दों की हालत काफी चिंताजनक है। इन सभी मोर्चों पर भारत की स्थिति इस चैनल के अपने देश से काफी बेहतर है। फिर चैनल बात-बात पर भारत को उपदेश कैसे देता है? शायद भारतीयों ने यह प्रश्न कभी पूछा नहीं कि जनाब आपके देश में क्या हाल है?

अपने अस्तित्व से ही अनवरत विवादों में रहा है कतर। कभी एकाधिकारवादी मानसिकता व नीतियों के कारण तो कभी राजनीतिक-कूटनीतिक संकट के चलते। पिछले पांच दशकों से मीडिया व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर दमनकारी कानून के सम्बन्ध में अनेक अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संस्थाओं व मीडिया संस्थानों द्वारा घोर आलोचनाएं सहनी पड़ रही है। हाल में भी कुछ ऐसा ही घटित हुआ है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और मीडिया कर्मियों के कार्य को प्रतिबंधित करने वाला एक नया कतरी कानून आया है।

जिसमें कोई भी कतरी देश-विदेश में झूठी या पक्षपातपूर्ण अफवाह, बयानों या समाचारों का प्रकाशन-प्रसारण करता है, जो राष्ट्रीय हितों को नुकसान पहुंचाता है, जनमत को प्रभावित करता है, या राज्य के सार्वजनिक व सामाजिक निर्णयों की चर्चा व आलोचना सार्वजनिक रूप से करता है तो वह दोषी माना जाएगा। इस कानून के तहत अपराधी को अधिकतम एक लाख कतरी रियाल का जुर्माना और पांच साल तक की जेल होगी।

कतर का यह नया फरमान अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानून के तहत अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उल्लंघन करता है, जिस पर उसने दो साल पहले ही आईसीसीपीआर साल 2018 की बैठक में हस्ताक्षर किए थे। इस पर मध्य-पूर्व देशों समेत अन्तर्राष्ट्रीय मीडिया चैनलों, अखबारों, वेबसाइट पर खूब चर्चा रही, सिवाए अल-जजीरा के। कतर के अंग्रेजी अखबार अल राया ने अपनी वेबसाइट पर इस कानून को लेकर जब गम्भीर चर्चा की, विस्तृत विश्लेषण किया, तो दबाव के चलते अखबार को लेख हटाने के लिए और माफीनामा जारी करने के लिए मजबूर किया गया। कारण यह खबर अनौपचारिक स्त्रोत के हवाले से थी, जबकि यह फेक न्यूज नहीं थी।

शुरुआती दौर में कतर सरकार द्वारा न्यूज

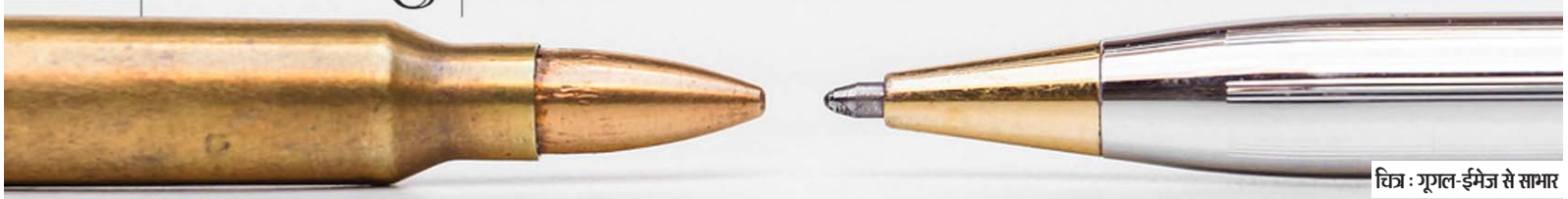

चित्र : गूगल-ईमेज से साभार

रूम में सेंसर बिठाए रहते थे, जो यह तय करते थे कि सत्तारूढ़ थानी परिवार व उसके निर्णयों के बारे में, क्या प्रकाशित होगा क्या नहीं। कतर संविधान में अनुच्छेद 48 जो प्रेस की स्वतंत्रता, मुद्रण और प्रकाशन कानून सम्मत होने की बात करता है। वहीं 1979 का प्रेस कानून आज भी कतरी प्रिंट मीडिया को नियंत्रित करता है। यह कानून कहता है कि 'कतर राज्य के आमीर (प्रधानमंत्री) की आलोचना नहीं की जाएगी, जब तक कि उनके कार्यालय की ओर से लिखित अनुमति के तहत कोई बयान नहीं दिया जाता है।' इस कानून का उल्लंघन करने वाले पर मानहानि के तहत केस दर्ज किया जाता है। कतर में मानहानि के तहत अपराधी पर बीस हजार कतरी रियाल का जुर्माना व सात साल की जेल का प्रावधान है। इसीलिए कतर में पत्रकार अक्सर सेल्फ सेंसर करते हैं, और कुछ भी छापने से डरते हैं, इस भय से कि कहीं उन पर इस कानून का उल्लंघन करने का आरोप न लगाया जाए।

कतर ने ऐसा कानूनी ढांचा तैयार किया हुआ है, जो सत्ताधारी परिवार व उसके निर्णयों की आलोचना या असंतोष को प्रकट करने की स्वतंत्रता को कुचल कर रख देता है। साल 2016 में दोहा न्यूज को भी यही भुगतना पड़ा। कतर में लोकप्रिय अंग्रेजी वेबसाइट दोहा न्यूज, जो अक्सर संवेदनशील राजनीतिक व सामाजिक मुद्दों पर चर्चा करती थी, उस पर अनिश्चितकालीन बैन लगा दिया गया। रिपोर्ट्स विदाउट बॉर्डर्स के अनुसार दोहा न्यूज वेबसाइट के कर्मचारियों का कहना है कि यह सेंसरशिप पूर्वाग्रह के चलते लगाया गया है।

कतरी संविधान विरोधाभासी है। एक ओर अभिव्यक्ति की स्वंतत्रता की बात करता है, तो दूसरी ओर राज परिवार व आमीर की आलोचना करने पर प्रतिबंध लगाता है। कतरी कानून सत्ताधारी परिवार को लेकर कितना संवेदनशील है। इसे अरब स्प्रिंग मूवमेंट के दौरान घटी एक घटना से समझा जा सकता है। यह वह दौर था जब खाड़ी देशों में एकाधिकारवादी मानसिकता, सत्तारूढ़ परिवारों के खिलाफ आक्रोश था, अपने अधिकारों और आजादी की लड़ाई लड़ी जा रही थी। साल 2010 में कतरी कवि मोहम्मद अल-अजमी ने मिस्त्र के काहिरा में अपने अर्पाटमेंट में कुछ लोगों के बीच सत्तारूढ़ थानी परिवार की आलोचना करने वाली एक कविता सुनाई, जो यू-ट्यूब के जरिए काफी वायरल हुई। लोगों ने वीडियो को काफी पसन्द किया। जिसके बाद 2011 में मोहम्मद अल-अजमी को गिरफ्तार किया गया और आरोप लगाया कि सरकार को उखाड़ फेंकने और सार्वजनिक रूप से आमीर की आलोचना अपराध है। परिणामस्वरूप अल-अजमी को साल 2012 में आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई थी। साल 2013 में अपील करने के बाद अदालत ने सजा को घटाकर 15 साल कर दिया था। अल-अजमी की रिहाई के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कैंपेन चलता रहा, जिसके बाद दबाव के चलते चार साल बाद अजमी को बशर्ते रिहा करना पड़ा। इसके बाद कतर की न्यायपालिका में खामियों की आलोचना करने पर, अल-अजमी के वकील, नजीब अल-नूमी को निशाना बनाना जारी रखा। फरवरी 2017 में, सरकार ने अल-नूमी पर मन-मुताबिक यात्रा करने पर प्रतिबंध लगा दिया।

खाड़ी देशों में 10 में से 9 युवा किसी न किसी सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म का उपयोग करते हैं। यह खुलासा ऑरेगोन विश्वविद्यालय के पत्रकारिता एवं संचार स्कूल ने अपनी रिसर्च में किया है। कतर में इन्टरनेट पर भी

चित्र : गूगल-ईमेज से साभार

सेल्फ-सेंसरशिप की मंशा वाला साइबर अपराध कानून 2014, जो अरब स्प्रिंग मूवमेंट के बाद लाया गया। जिसके अन्तर्गत 'इंटरनेट पर झूठी खबर के प्रसार को अपराधी बताता है और जो सामाजिक मूल्यों, सिद्धांतों का उल्लंघन करता है या दूसरों की निंदा या अपमान करता है, ऑनलाइन आपत्तिजनक पोस्ट करने' के दोषी को अधिकतम पांच लाख कतरी रियाल और तीन साल जेल का प्रावधान है।

सेल्फ-सेंसरशिप के एक उदाहरण के रूप में, एमनेस्टी इंटरनेशनल ने कतर में होने वाले फीफा वर्ल्ड कप 2022 के लिए प्रवासी मजदूरों के उत्पीडन पर एक रिपोर्ट प्रकाशित की, जिसमें पाया गया कि ज्यादातर स्थानीय मीडिया ने प्रवासी मजदूरों के विषय को कवर ही नहीं किया।

कोविड-19 वैश्विक महामारी के दौरान एमनेस्टी इंटरनेशनल ने आरोप लगाए हैं कि कतर में प्रवासी मजदूरों को अवैध रूप से निष्कासित किया गया। एमनेस्टी के मुताबिक 'मार्च 2020 में सैकड़ों लोगों को कतर पुलिस द्वारा गिरफ्तार किया गया, जिसमें से 20 नेपाली पुरुषों का साक्षात्कार लिया। उसमें अधिकांश लोगों ने कहा कि उन्हें यह कहकर पुलिस ले गई कि उनका कोरोना टेस्ट किया जाएगा और स्क्रीनिंग के बाद वे अपने घरों को लौट सकते हैं। जबकि उन्हें केंद्रों पर नजरबंदी के लिए ले जाया गया और नेपाल लौटने से पहले कई दिनों तक अमानवीय परिस्थितियों में रखा गया था।'

कतर में कफाला के अनुसार प्रवासी मजदूरों के साथ व्यवहार किया जाता रहा है। कफाला इस्लामिक प्रणाली है, जो प्रवासी मजदूरों के तमाम अधिकारों को मालिक के अधीन मानती है। जो प्रवासी मजदूर को गुलाम बना देती है। इसी तर्ज पर कतर में प्रवासी मजदूरों के पासपोर्ट उनके मालिक जब्त कर लेते हैं, उचित वेतन नहीं देते हैं, जोकि प्रवासी श्रमिक अधिकारों का उल्लंघन है। जो पत्रकार व शोधकर्ता प्रवासी श्रमिकों के हालातों की जांच करने का प्रयास करते हैं, कतर में उनकी गिरफ्तारी का इतिहास रहा है। गल्फ सेन्टर फॉर ह्यूमन राइट्स 2019 की रिपोर्ट के अनुसार मार्च 2015 में जर्मन प्रसारक डब्लूडीआर और एआरडी के लिए विश्व कप के आसपास होते भ्रष्टाचार पर एक डॉक्यूमेंट्री फिल्म बनाने वाली टीम को गिरफ्तार कर लिया और उनके उपकरण को जब्त कर लिया।

15 मई 2016 को कतरी अधिकारियों ने बीबीसी के एक पत्रकार और उसके समूह को प्रवासी श्रमिकों की परिस्थितियों को कवर करने पर हिरासत में लिया।

16 मई 2016 को, डेनिश ब्रॉडकास्टिंग कॉरपोरेशन के पत्रकार जो प्रवासी श्रमिकों के फुटबॉल मैच को कवर कर रहे थे। को, हिरासत में लिया गया था और उनके फुटेज को छीन लिया गया था।

दोहा न्यूज पर बैन लगने से पूर्व कतरी सरकार ने बाल यौन शोषण के एक मामले को कवर करने के लिए साइबर कानून के तहत्त दोहा के संपादकों में से एक को हिरासत में ले लिया।

2016 में ही कतरी अधिकारियों ने जॉर्जटाउन यूनिवर्सिटी के स्कूल ऑफ फॉरेन सर्विस के एक अमेरिकी छात्र को हिरासत में लिया जो कतर में प्रवासी श्रमिकों की परिस्थितियों का अध्ययन करने के लिए आया था।

कतर पर आतंकवाद का समर्थन करने के आरोप भी समय-समय पर लगते रहे हैं, मध्य-पूर्वी देशों समेत कई अन्य देश अल-कायदा और कतर के बीच संबंधों की बात करते हैं। अल-जजीरा के एक पूर्व पत्रकार, योसरी फॉउदा ने भी अपनी किताब 'इन दि वे ऑफ हार्म: फ्रॉम दि स्ट्रॉन्गहोल्डस् ऑफ अल-कायदा टू दि हार्ट ऑफ आईएसआईएस, में बताया है कि कैसे पूर्व कतरी अमीर, शेख हमद बिन खलीफा अल थानी, ने अल-कायदा के साथ अपने मुलाकात के वीडियो रिकॉर्डिंग प्राप्त करने के लिए एक मिलियन यूएस डॉलर का भुगतान किया। फाउदा के अनुसार 2002 में हमद बिन खलीफा ने छुपकर अल-कायदा के सदस्यों के साथ मुलाकात की थी। इसी तरह अपनी पुस्तक 'इनसाइड अल-कायदा' में, लेखक रोहन गुणरत्न ने लिखा : 'यह निश्चित है कि कतर में शाही परिवार का एक सदस्य अल-कायदा संगठन का समर्थन करता है।'

एबीसी न्यूज ने अमेरिकी खुफिया अधिकारियों के हवाले से कहा कि ओसामा बिन लादेन, सत्तारूढ़ परिवार के सदस्य अब्दुल्ला बिन खालिद अल-थानी से मिलने 1996 से 2000 के बीच में कतर गया था।

कतर में गहराते मानवाधिकार व प्रवासी मजदूर संकट, मीडिया की बद्दतर स्थिति और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को प्रतिबंधित करते कानून, सेल्फ सेंसरशिप नीतियां, आतंकवाद को पनाह देने वाले जैसे गम्भीर मुद्दों पर अल-जजीरा चुप्पी साधता रहा है।

सत्तारूढ़ परिवार पर यह आरोप बार-बार लगता रहता है कि उसने सभी मंत्रालयों में अपने परिवार व सगे-संबंधियों को बिठा रखा है। कतर के सबसे बड़े मीडिया संस्थान अल-जजीरा का बोर्ड अध्यक्ष शेख हमद बिन थमेर अल थानी, सत्तारूढ़ परिवार से ही है, जो इसे पूर्णरूप से नियंत्रित करता है।

मीडिया संस्थान के नाम पर अल-जजीरा थानी परिवार का राजनीतिक टिप्पणीकार है। कतरी सरकार अल-जजीरा के बैनर तले अपने विरोधियों के विरुद्ध मीडिया कैम्पेन चलाता आया है और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर अपनी छवि बेहतर दिखाने का प्रयास करता रहा है, जबकि सच्चाई इसके विपरीत है। कतर शासित मीडिया अल-जजीरा की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता कितनी है, और पूर्वाग्रह से कितना ग्रसित है, यह तथ्य भी खुलकर सामने आ रहे हैं।

लेखक, युवा पत्रकार हैं।

होना मेरे मैं सा

चित्र : गूगल-ईमेज से साभार

छवि गढ़ते समय जिस आकार को ध्यान रखकर अथवा सामने देकर चित्रकार जो बनाता है, धीरे-धीरे उस वस्तु-रूप की आत्मा में वह प्रवेश कर जाता है, क्योंकि रचनाकारों में परकाया प्रवेश की शक्ति होती है...

❐ **त्रिवेणी प्रसाद तिवारी**

जैसे ही किसी जनसामान्य को पता चलता है आप एक कलाकार हैं, आप किसी को चित्रित कर सकते हैं तो वह व्यक्ति विस्मय और कुतूहल से भरकर पूछ बैठता है- मेरा चित्र बना लोगे? कलाकार तनिक मुस्कान के साथ कहता है- हां, बन जाएगा। इस पर वह आंखों में आश्चर्य भरकर विश्वास जमाते हुए कहता है- मेरा फोटो? मेरा मतलब एकदम ऐसा ही मेरा चेहरा बना देंगे। कलाकार के हां में सिर हिलाते ही वह विनीत भाव में आश्चर्य से जड़ हो जाता है। उसकी आंखें सोचने लगती हैं उसका अपना ही रूप कैसा होगा? जिसे वह आईने में देखा करता है। किसी प्रतिबिंब जैसा होगा या उसके अपने जैसा होगा? उसकी अपनी मनोछवि जिसे केवल अंतर की आंखें ही देख सकती हैं। क्या ऐसा रूप कलाकार बनाता है? वास्तव में कलाकार चंचल मन छवियों का चितेरा होता है। चित्रकर्म के विषय में भारतीय शिल्पग्रंथों में 'दर्पणे प्रतिबिंबवत्' अर्थात दर्पण में प्रतिबिंब की तरह चित्रित करने को सादृश्य कहा गया है। छवि गढ़ते समय जिस आकार को ध्यान रखकर अथवा सामने देकर चित्रकार जो बनाता है, धीरे-धीरे उस वस्तु-रूप की आत्मा में वह प्रवेश कर जाता है, क्योंकि रचनाकारों में परकाया प्रवेश की शक्ति होती है। वह सामने वाले की आंखों में तिरकर हृदयस्थ भावों को छूकर वापस अपने मनोभावों में ढालकर रूप गढ़ता है।

स्वयं को छोड़कर जगत के सभी पदार्थ 'अन्य' हैं। अन्य में 'स्व' के सहारे भावों का आरोपण करके स्वरचना होती है। स्व के बोध की प्रतीति अन्य के रूपों में होती है। अत: कलाकार की यात्रा अन्य के रूप साधना के माध्यम से स्व का ही विस्तार है। किंतु जगत में अन्य सभी पदार्थों तत्वों के अपने गुण-धर्म विशेष्टताएं होती हैं। चित्रण में चित्रित वस्तु के गुण-भाव-रंग उसी के प्राकृतिक अवस्था में

चित्र : गूगल-ईमेज से साभार

हो यह कलाकार के लिए पहली चुनौती होती है। हू-ब-हू या उस जैसा ही स्पंदित रूप गढ़ पाना भारतीय कला षडंग में 'सादृश्य' कहलाता है। यहां सादृश्य विधान ही जन सामान्य में आश्चर्य के भाव पैदा करता है। सादृश्य या सदृश अर्थात वैसा ही दिखना जैसा आपने देखा अथवा जैसा आपने सोचा। सादृश्य सबसे कठिन स्वाध्याय है, कलायात्रा का। किसी एक ही रूप, आकार,ए रंग की साधना चित्रण जीवन पर्यंत की असीमित सामग्री होती है। प्रकृति में विद्यमान अनगिनत रूप, बदलता स्वरूप कला साधना के कई छोर हैं, जिसमें कोई रंग को लेकर चलता है, कोई देहयष्टि की भंगिमाएं ही चित्रित करता रह जाता है तो किसी का पूरा जीवन पुष्प बनाते-बनाते चुक जाता है, तो कहीं कोई बेडौल से अनगढ़ पत्थरों की अनबूझ मूकता पर ही मूर्ति शिल्पों की शृंखला बनाकर अपना अलग मार्ग बना ले जाता है। क्योंकि यह संसार रूप-भाव ही है, जहां आकार ज्ञान हमारे चक्षु सीमा हैं। किसी के जैसा होते हुए या किसी के जैसा बनाते हुए सादृश्य गढ़ते-गढ़ते ये आंखें रूप पर ही तिरती रहती हैं।

किसी वस्तु के चित्रण में दो मुख्य बातों का ध्यान रखना पड़ता है- आकार और सतह की बुनावट। आकार एक आवरण रेखा है। किसी वस्तु की सत्य प्रतीति सतह की बुनावट से होती है। प्रकृति में उपस्थित सभी चीजों को आंखें उसकी विशिष्ट संरचनाओं से पहचानती हैं। कोई वस्तु खुरदुरी है, कोई चिकनी। इस चिकने-खुरदुरेपन की भी कई कोटियां हैं। जैसे संगमरमर की सतह, ग्रेनाइट पत्थर की सतह और चुनार बलुआ पत्थर की सतह की बुनावट। सभी पत्थर घिसने पर चिकने होंगे लेकिन सतह की संरचनाओं की भिन्नता से उसकी ओप (चमक) भिन्न-भिन्न होगी। इस तरह असंख्य रूप असंख्य संरचनाएं। कला में आकारिकी की संरचना का महत्वपूर्ण उपकरण है सादृश्यता।

सादृश्यता व्यापक अवधारणा वाला शब्द है। यह केवल सतह की बुनावट की कारीगरी मात्र नहीं है। यह कारीगरी तो केवल रूप-

साम्य का आश्चर्य भर है। भारतीय कला अवधारणा में इसका प्रयोग गुण-भाव के अनुसार किया गया है। इसीलिए हमारे यहां आराध्य के चेहरे, शरीर में सौम्यता, लालित्य जैसे गुण-भाव को प्रतिस्थापित किया गया है। सौम्यता एक गुण-भाव है। इसको दर्शाने के लिए कोई एक मानवी चेहरा आदर्श नहीं बनाया गया बल्कि एक ऐसा रूप हो जो सौम्यता के समस्त भाव लक्षणों का समन्वित रूप हो। हमारे यहां सृजित आराध्य का सादृश्य किसी एक के जैसा नहीं होता बल्कि कुछ-कुछ सबके जैसा होता है। उदाहरण स्वरूप भगवान विष्णु के सौम्यता, नटराज की भंगिमाए या बुद्ध का मुखमंडल। यह किसी सामान्य की सामूहिक अपेक्षाओं का भाव है। वहीं आप पाश्चात्य पौराणिक देवताओं की प्रतिमा, अपोलो, ऐथेना आदि को देखिए। इन प्रतिमाओं के मुखमंडल किसी सामान्य जन की मुखाकृति का हु-ब-हू चित्रण लगता है।

भारतीय पक्ष भाव की सादृश्यता महत्वपूर्ण मानता है और वहीं पाश्चात्य सौन्दर्य दृष्टि में आकार और सतह की यथार्थ बुनावट होती है। अर्थात आंखों से जैसा दिखता है, उतनी ही मात्रा में रंग, प्रकाश और समय दिखाया जाता है, जबकि भारतीय कला में आंतरिक पक्ष का विशेष प्रकटीकरण है। सत्व, रज, तम के विशेष गुण-भाव और उनको व्यक्त करती विशिष्ट मुद्राएं बिल्कुल भिन्न सौंदर्य दृष्टि की मांग करती हैं। यहां तात्पर्य यह नहीं है कि पाश्चात्य कला में भाव नहीं है बल्कि वहां सादृश्यता शुद्ध मानवी रूप में संयोजित है। जैसे फ्रेंच कलाकार रेम्ब्रां के व्यक्ति चित्र। उन चित्रों में चित्रित चेहरे मूल व्यक्तियों से कहीं अधिक सुंदर प्रतीत होते हैं। चित्र में चित्रित वस्तु व्यक्ति की सहज पहचान हो और उस वस्तु व्यक्ति के अंदर चल रही संवेदनाओं-भावों का भी उसी अनुपात में चित्रण होना चाहिए।

विष्णुधर्मोत्तर पुराण के चित्रसूत्र अध्याय में सादृश्य को चित्र का महत्वपूर्ण अंग कहा गया है- 'चित्रे सादृश्यकरणं प्रधानं परिकीर्तितम्'

दृश्य कलाओं (चित्र-मूर्ति-स्थापत्य) में सादृश्य की प्रमाशक्ति का होना जरूरी है। सादृश्यता तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य पैदा करती है। इस परिप्रेक्ष्य को पढ़ने में कलाकार की मेधा जितनी महत्वपूर्ण है उतनी ही महत्वपूर्ण है माध्यम के साथ बर्ताव। अलग-अलग माध्यमों यथा- काष्ठ, मिट्टी, पत्थर, कांस्य, फाइबर और भित्ति चित्र, कैनवास पेपर इत्यादि में रूपांकन करते समय इनका प्रयोग और प्रकृति दोनों का ज्ञान होना आवश्यक है। वस्तुत: सादृश्य एक स्वाध्याय है, निरंतर साधना है दृष्टिकोण का। चूंकि कलाएं चाक्षुष होती हैं। अत: देखने की तुलनात्मक दृष्टिकोण भिन्न.भिन्न भाव प्रकट करता है। भाव अदृश्य होता है किंतु अपनी भंगिमाओं से उसका पता चलता है। सही मायने में वही कला लोगों के मानस में उतर पाती है जिसमें मनोभावों का सशक्त चित्रण हो। जैसे महान कलाकार नंदलाल बोस द्वारा बनाई गई गांधी जी पर एक रेखांकन है जिसमें केवल पीछे की ओर से लाठी लिए गांधीजी का एक रेखांकन में उनका व्यक्तित्व उतर आया है। बहुत कम रेखाओं में गांधीत्व को साध लेना यही कलाकार की सादृश्य साधना है।

किसी रूपाकार का एकाग्र मन इतना अभ्यास कर लेता है कि उस वस्तु आकार के सरल रेखांकन का मुहावरा बना लेता है। वह शैली बन जाती है, उसकी पहचान बन जाती है। इसी तरह जामिनी राय ने कालीघाट के पटचित्रों की शैली को अपनी कला में ढालकर भारतीय कला जगत को लोक शैली का नया मुहावरा प्रदान किया।

किसी रूपाकार का एकाग्र मन इतना अभ्यास कर लेता है कि उस वस्तु आकार के सरल रेखांकन का मुहावरा बना लेता है। वह शैली बन जाती है, उसकी पहचान बन जाती है। इसी तरह जामिनी राय ने कालीघाट के पटचित्रों की शैली को अपनी कला में ढालकर भारतीय कला जगत को लोक शैली का नया मुहावरा प्रदान किया...

प्रकृति में चेतन तत्व की अनुभूति कलाकार को अधिक संवेदनशील बनाता है। संवेदनशीलता किसी प्रतिकृति के निर्माण में जीवंतता का सृजन करता है। आकार का अभ्यास उसका अनुपात स्वाध्यायपूर्वक सीखा जा सकता है, परंतु बाह्याकार को चित्रित करना ही अभीष्ठ नहीं होता। उसमें प्राणछन्द होना चाहिए। केवल बाह्याकार की चित्रण क्षमता ही नहीं बल्कि भावों की आंतरिक सादृश्य की भी अनुभूति होनी चाहिए। जिसकी संवेदना जितनी गहरी होती है, मानव से इतर प्रकृति के हर वस्तु में उसकी यात्रा उतनी ही गहरी होती है, इसलिए वह पाता है, अजंता, वाघ (गुफा चित्र) के चित्र, इसलिए वह बना पाता है पत्थरों में बुद्ध की करुणामयी आभा। इसलिए वह खींच पाता है लयात्मक रेखाओं में नंदलाल बोस की 'वीणा-वादिनी'। तभी तो विश्व में पिकासो की 'गुएर्निका' और भारत के महान मंदिरों का भव्य शिल्प आकार ले पाता है।

लेखक कला चिन्तक हैं।

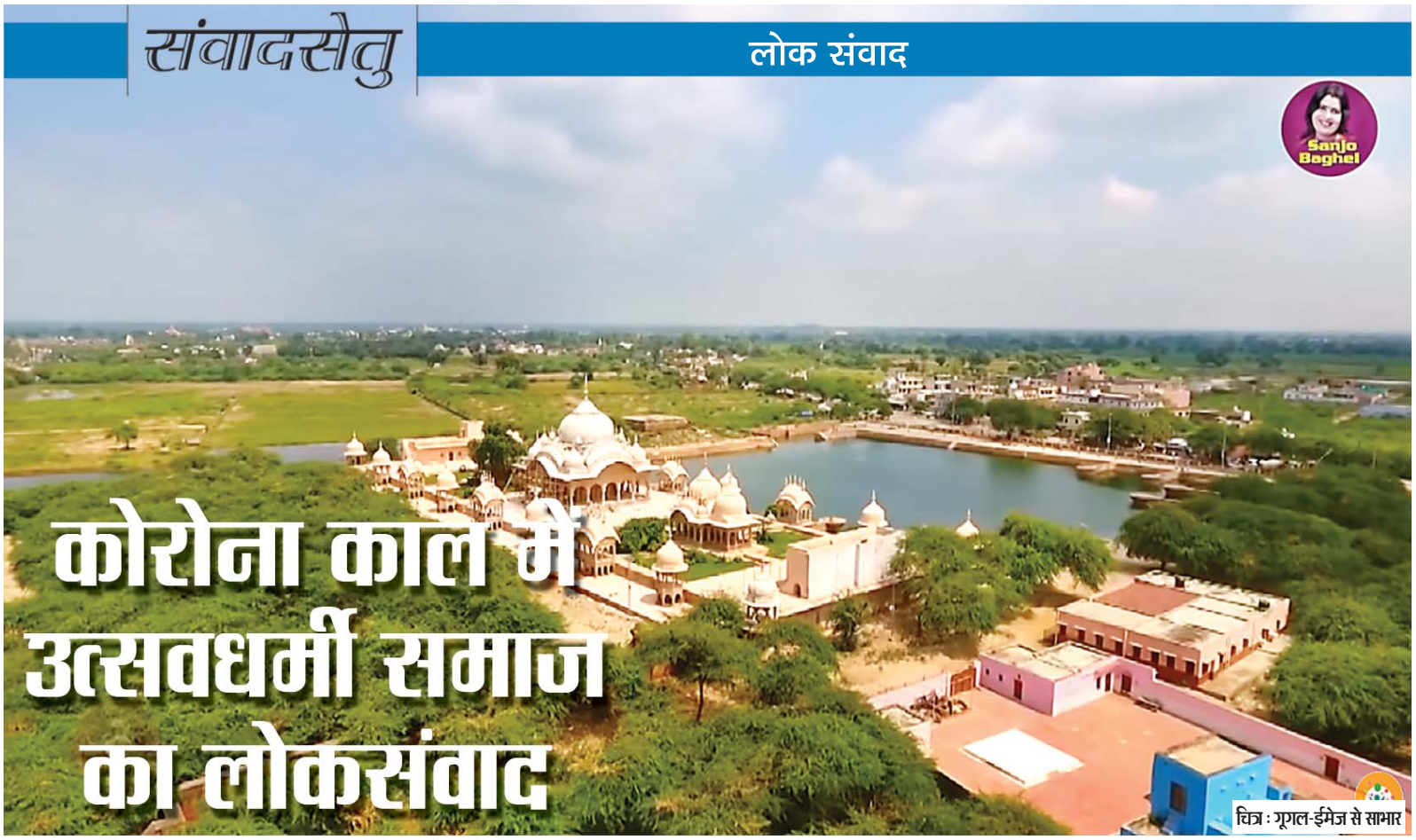

कोरोना काल में उत्सवधर्मी समाज का लोकसंवाद

चित्र : गूगल-ईमेज से साभार

अल्हैतों का आल्हा, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के समाज में प्रचलित रागनियां और भोजपुरी लोकगीतों समेत तमाम लोककलाओं से जुड़े कलाकारों ने कोरोना से निपटने के संदेश को पिरोकर जन-जन तक पहुंचाया है। महाकाल में आस्था रखने वाले समाज ने कोरोना के चलते पैनिक में आने की बजाय सावधानी, नियमों के पालन और मुसीबत में फंसे लोगों की मदद का संदेश देने का काम किया...

❐ सूर्य प्रकाश

भारत के वाचाल समाज ने हमेशा ही दुनिया के तमाम संकटों में एक नई दृष्टि के साथ समाधान की बात कही है। भारत में यह काम हमेशा ही लोकसंवाद के माध्यमों ने किया है। कोरोना के इस संकट में भी भारत के लोक कलाकारों ने आगे बढ़कर संदेश देने का काम किया है। अल्हैतों का आल्हा, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के समाज में प्रचलित रागनियां और भोजपुरी लोकगीतों समेत तमाम लोककलाओं से जुड़े कलाकारों ने कोरोना से निपटने के संदेश को पिरोकर जन-जन तक पहुंचाया है। महाकाल में आस्था रखने वाले समाज ने कोरोना के चलते पैनिक में आने की बजाय सावधानी, नियमों के पालन और मुसीबत में फंसे लोगों की मदद का संदेश देने का काम किया।

आल्हा के लोकगायकों ने भी कोरोना के संक्रमण से बचाव के लिए सहज और अर्थपूर्ण शब्दों में समाज को प्रेरित किया है। बुंदेलखंड के वीर योद्धाओं आल्हा और ऊदल की वीरता के बखान करने वाले काव्य आल्हखंड की तर्ज पर बने इन गीतों ने जनता को उनकी ही बोली में कोरोना के प्रति जागरूक किया है। ऐसे ही एक गीत में आल्हा की लोकगायिका संजो बघेल कोरोना से बचाव के लिए प्रेरित करते हुए कहती हैं।

लगी है किसकी है मोटी हाय, झेल रही है दुनिया बीमारी,
शहर वुहान से पहुंची हाय, लाखों दीन्हें प्राण गंवाय।
सभी लोग संयम अपनाय, हाथों को अच्छे से धोना,
रहें सभी से दूरी बनाय, मुंह पर मास्क बांधकर रखना।
रहना घर संकल्प बनाय, इन बातों का पालन करना,
देंगे हम बीमारी को हराय, लॉकडाउन में घर ही रहना।

कोरोना के इस संकट में भोजपुरी गीतों ने भी अपने सुरीले अंदाज में कोरोना के पैनिक से बचाते हुए लोगों को सहज भाव के साथ घर रहने और नियमों के पालन के लिए प्रेरित

किया। भले ही बीते कुछ सालों में भोजपुरी के साथ भड़कीले गीतों को कुछ गायकों ने चस्पा करने की कोशिश की है, लेकिन इस दौर में पलायन के दर्द, कोरोना के मर्ज और नियमों को मानने के फर्ज को भोजपुरी गीतों ने बेहद रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है।

कोरोना जैसी महामारी के चलते जहां एक तरफ दुनिया खौफ के साये में जी रही है, वहां भारत में इस पर गीतों का सृजन होना बताता है कि भारत का उत्सवधर्मी समाज किस तरह से संकटों में भी अपनी राह बनाता है। यह सब इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि यह काम उस समाज ने जीवटता के साथ किया है, जिसका वैश्विक मीडिया ने हमेशा गरीबों के आंकड़े के तौर पर ही चित्रण किया है। उस समाज ने यह साबित किया है कि वह किस तरह सहजता से कड़े नियमों का पालन कर सकता है और संसाधनों की परवाह न कर हौसले के साथ कोरोना जैसे अदृश्य दुश्मन के मुकाबिल भी खड़ा रह सकता है...

जे घर ही में प्रेम लगाई पिया, ओकर पजरा कोरोना न आई पिया।
घर ही में समय बिताईं, हमार पिया रोड पर न जाईं...
कोरोना पर भइल बा कड़ाई, हमार पिया बाहरा न जाईं,
बचब आप अउर परिवार बच जाई, कुछ जिम्मेदारी लीहै का चाही।
बार-बार हाथ सबुनियाईं, हमार पिया रोड पर न जाईं...
पुलिस घूम-घूम बात समझावै, डॉक्टर एहि के दवाई समझावै,
कोरोना पर भइल बा कड़ाई हमार पिया रोड पर न जाईं।

भोजपुरी के लोकप्रिय कलाकार भरत शर्मा ने अपने सुरीले अंदाज में इस गीत को पेश किया है। ऐसा ही एक गीत भोजपुरी गीत है, गइले कमाए उ तो दिल्ली ए सखी, लॉकडाउन में सइयां फंस गइले। इस गीत में लेखक ने एक साथ कोरोना के संकट, प्रेम और लॉकडाउन के नियमों को पिरोने का काम किया है। एक ऐसे दौर में जब हम अपनी लोकभा और लोककलाओं से दूर होते जा रहे हैं, तब इस तरह के गीतों ने यू-ट्यूब से लेकर फेसबुक तक न्यू मीडिया के तमाम माध्यमों में ख्याति हासिल की है। हरियाणवी के लोकगायक शैन्की गोस्वामी ने भी रैप की नई विधा के अंदाज में कोरोना के लॉकडाउन को लेकर बेहद रोचक गीत प्रस्तुत किया है। भारत की उत्सवधर्मिता का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए उन्होंने इस गीत को जिस शैली में पेश किया है, उससे न सिर्फ कोरोना को लेकर संदेश मिलता है बल्कि समाज का सात्विक मनोरंजन भी होता है। प्रेमी और प्रेयसी के बीच संवाद को कोरोना और लॉकडाउन से जोड़ते हुए उन्होंने बेहद ही सहज ढंग से रोचक गीत प्रस्तुत किया है। जिसके बोल इस प्रकार हैं...

लॉकडाउन होया मेरा गाम सुण लै,
लगता न गेड़ा लाडो तेरे शहर का।
बात मेरी मान रखियो तू भी ध्यान,
घर आगे गेड़ा लागे पीसीआर का।
पड़ी है मुसीबत जो टल जावैगी,
राखना पड़ेगा लाडो ध्यान खुद का।
हाथ नहीं मिलानाए मेंटेन रखो गैप,
वर्ल्ड वार होया तीसरा मैदान युद्ध का।

शैन्की गोस्वामी के इस गीत को य-ट्यूब पर अब तक करीब 2.5 करोड़ लोग सुन चुके हैं। भले ही किसी कला को मापने के लिए व्यूअरशिप ही एकमात्र पैमाना नहीं हो सकती, लेकिन आंकड़ों के इस दौर में महामारी पर बने गीत को इतनी लोकप्रियता मिलना मायने जरूर रखता है। स्थान की सीमा को देखते हुए तमाम ऐसे हर प्रयास का उल्लेख यहां नहीं किया जा सकता, लेकिन कोरोना के संकट में लोकसंवाद के माध्यमों ने एक बार फिर साबित किया है कि कोई भी संदेश व्यक्ति अपनी मौलिक भाषा में ही सहजता के साथ समझ पाता है। भाषाविज्ञानियों ने भी अपने तमाम अध्ययनों में कहा है कि लोकभाषाओं में संवाद तमाम विवादों के हल का कारण बन सकता है। कोरोना काल में भी हमें यह देखने को मिलता है कि जो काम अंग्रेजी अखबारों के लंबे अग्रलेख, टीवी चैनलों की अंतहीन उबाऊ बहसें नहीं कर पाईं, उसे सहजता के साथ लोक गीतों ने किया है।

कोरोना जैसी महामारी के चलते जहां एक तरफ दुनिया खौफ के साये में जी रही है, वहां भारत में इस पर गीतों का सृजन होना बताता है कि भारत का उत्सवधर्मी समाज किस तरह से संकटों में भी अपनी राह बनाता है। यह सब इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि यह काम उस समाज ने जीवटता के साथ किया है, जिसका वैश्विक मीडिया ने हमेशा गरीबों के आंकड़े के तौर पर ही चित्रण किया है। उस समाज ने यह साबित किया है कि वह किस तरह सहजता से कड़े नियमों का पालन कर सकता है और संसाधनों की परवाह न कर हौसले के साथ कोरोना जैसे अदृश्य दुश्मन के मुकाबिल भी खड़ा रह सकता है।

भारत के समाज में लिखित इतिहास का प्रभाव भले ही बड़ा अकादमिक महत्व रखता है, लेकिन आम लोगों के जीवन की बात करें तो अब भी भारतीय समाज मौखिक तौर पर हासिल परंपराओं का पालन कर रहा है। कोरोना के इस संकट में भारत के लोक ने साबित किया है कि संवाद के असल मायने आज भी उनके लिए बहुत बदले नहीं हैं।

मौसम-समाचार का नया हथियार

❐ आनन्द

चित्र : गूगल-ईमेज से साभार

सूचनाएं हमेशा से हथियार के रूप में काम करती रही हैं, इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं। समाचार भी हथियारों की तरह उपयोग में लाए जाते रहे हैं। इसके भी अनेक उदाहरण मिलते हैं, लेकिन पहली बार दुनिया में मौसम समाचार ने हथियार के रूप में काम किया है। मौसम समाचार को भारत ने पाकिस्तान को सबक सिखाने के लिए और जम्मू-कश्मीर के गिलगित-बाल्टिस्तान के हिस्से पर अपने नैसर्गिक दावे के लिए उपयोग किया है और यह काफी प्रभावी सिद्ध हुआ है। भारतीय मौसम विभाग द्वारा 7 मई को अपने मौसम पूर्वानुमानों में पाकिस्तान अधिकृत जम्मू-कश्मीर के मुजफ्फराबाद जिले एवं पाकिस्तान अधिक्रांत लद्दाख क्षेत्र के गिलगित, बाल्टिस्तान को भी शामिल किया गया। तब से प्रतिदिन डीडी न्यूज अपने मौसम की रिपोर्ट कार्यक्रम में इन क्षेत्रों के तापमान को भी निरंतर दिखा रहा है। समाचार चैनलों द्वारा दिखाए जाने वाला यह मौसम पूर्वानुमान केवल गिलगित, बाल्टिस्तान एवं मुजफराबाद का तापमान नहीं दिखा रहा है, बल्कि भारत के वर्तमान मौसम का भी इससे साफ पता चल रहा है।

भारत से अंग्रेजी शासन समाप्त होने के समय महाराजा हरि सिंह के भारत प्रेम और पाकिस्तान में अधिमिलन न करने की प्रत्याशा के चलते पाकिस्तान ने राज्य पर हमला किया और जबरन कुछ हिस्सा कब्जा लिया, जो आज भी अवैध रूप से उसके अधीन है...

यह क्षेत्र भारत के संविधान और पूर्ववर्ती राज्य जम्मू-कश्मीर के संविधान के अनुसार भी भारत का अभिन्न एवं अविभाज्य अंग है। भारत से अंग्रेजी शासन समाप्त होने के समय महाराजा हरि सिंह के भारत प्रेम और पाकिस्तान में अधिमिलन न करने की प्रत्याशा के चलते पाकिस्तान ने राज्य पर हमला किया और जबरन कुछ हिस्सा कब्जा लिया, जो आज भी अवैध रूप से उसके अधीन है। अपने इस क्षेत्र को वापस लेने का विचार भारत के मन में काफी समय से है।

इस हेतु 22 फरवरी 1994 में भारत की संसद ने सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव पारित कर एक संकल्प लिया। वह संकल्प था पूर्ववर्ती राज्य जम्मू-कश्मीर का जो क्षेत्र पाकिस्तान के अवैध कब्जे में है, उसे आजाद करा पुन: भारत में मिलाना। इसका अर्थ है आज के केंद्र शासित राज्य जम्मू-कश्मीर का मुजफ्फराबाद जिला एवं केंद्र शासित लद्दाख के गिलगित एवं बाल्टिस्तान क्षेत्र को पाकिस्तान के अवैध कब्जे से स्वतंत्र करा पुन: भारत में मिलाना। भारत की संसद का यह संकल्प पूरे भारत का संकल्प था।

लेकिन इतने वर्षों में इस क्षेत्र को पुन: भारत में या भारत के चित में लाने के लिए कोई ठोस कदम भारत द्वारा नहीं उठाए गए। साथ ही भारत की मीडिया ने भी इस क्षेत्र को अपनी रिपोर्टिंग से दूर ही रखा। जिस कारण भारतीय मानस से यह क्षेत्र एक तरह से लुप्त हो गया था। पाकिस्तान के अवैध कब्जे में जम्मू-कश्मीर एवं लद्दाख का एक बड़ा हिस्सा है, इसका तो थोड़ा आभास हमें था, लेकिन वह कहां है, कैसा है और किस क्षेत्र में है इसकी जानकारी बहुत कम थी। किसी भी संकल्प को पूर्ण करने के लिए उसके बारे में बार-बार सोचना और उसे अपने चित में सदैव जीवित रखना आवश्यक है। भले ही उसे पाने में सैंकड़ों वर्ष लग जाएं, पर चित्त में वह निरंतर रहना चाहिए।

आज बहुत वर्षों बाद भारतीय मौसम विभाग ने इस क्षेत्र को भारत के मौसम पूर्वानुमान में सम्मिलित करके भारतीय मानस में इसे पुन: जीवित कर दिया है। अब इसे चेतन रखने का कार्य भारतीय मीडिया ही कर सकता है, जो कई कारणों से लम्बे समय से इस क्षेत्र को भूला बैठा है। डीडी न्यूज द्वारा रोजाना इस क्षेत्र के तापमान को निरंतर दिखाना इस चेतना को सजीव रखने का कार्य कर रहा है। यह मौसम पूर्वानुमान भारत के बदलते मौसम की ओर संकेत कर रहा है। भारत अपने क्षेत्र को पुन: वापिस लेने के लिए संकल्पित है और यह मौसम पूर्वानुमान उस संकल्प को और दृढ़ कर रहा है।

लेखक जम्मू-कश्मीर मामलों के जानकार हैं।

चित्र : गूगल-ईमेज से साभार

मिलेनियल्स

मोटे तौर पर मिलेनियल्स की अवधारणा सात मुख्य बिंदुओं को स्पर्श करती है। ये सात बिंदु हैं- संस्कृति, प्रेरणा, नवाचार, डिजिटल तकनीकी, सहभागिता, ज्ञानार्जन और नेतृत्व। मिलेनियल्ज के प्रतिनिधि ये युवा संचार के युग में डिजिटल और वास्तविक जीवन में ज्यादा कुशल और तेज हैं। सामाजिक व सामुदायिक शैली के जीवन वाले ये युवा वैयक्तिक स्वतंत्रता को तरजीह देते हैं...

❐ रविन्द्र सिंह भढ़वाल

सामान्य प्रचलन में एक मान्यता है कि हर तीस वर्ष के अंतराल पर एक नई पीढ़ी आकार लेती है। मिलेनियल्स शब्द भी एक निश्चित अवधि के दौरान जन्म लेने वाली पीढ़ी को रिपरजेंट करता है। यह शब्द 1987 से प्रचलन में है। मिलेनियल्स को इन्फोर्मेशन एज नेट जेनरेशन इको बूमर्ज जेनरेशन नेक्सट आदि कई दूसरे नामों से भी जाना जाता है। यूएस के सेंसस ब्यूरो यानी जनगणना के आंकड़ों की मानें तो इस वक्त दुनिया की एक चौथाई आबादी मिलेनियल्स की है। आसान भाषा में आप इसे युवा आबादी कह सकते हैं। 1980 या 82 से साल से लेकर 2000 के बीच जो लोग पैदा हुए हैं यानी 21वीं सदी की शुरुआत में वयस्क हुए हैं, उन्हें मिलेनियल्स कहा जाता है। भारत में आमतौर से जिन्हें आजकल के बच्चे या आजकल के जवान कह दिया जाता है। कुछ समय पहले यह शब्द काफी सुर्खियों में था और सोशल मीडिया पर भी इसके पक्ष और विरोध में एक लंबी बहस हुई थी। यह शब्द तब एकाएक काफी लोकप्रिय हो गया था जब वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने ऑटोमोबाइल सेक्टर में आई जबरदस्त मंदी को लेकर बयान दिया कि मिलेनियल्स की सोच बदली है और वो ओला और उबर जैसी प्राइवेट टैक्सी के इस्तेमाल पर ज्यादा भरोसा कर रहे हैं।

मोटे तौर पर मिलेनियल्स की अवधारणा सात मुख्य बिंदुओं को स्पर्श करती है। ये सात बिंदु हैं- संस्कृति, प्रेरणा, नवाचार, डिजिटल तकनीकी, सहभागिता, ज्ञानार्जन और नेतृत्व। मिलेनियल्ज के प्रतिनिधि ये युवा संचार के युग में डिजिटल और वास्तविक जीवन में ज्यादा कुशल और तेज हैं। सामाजिक व सामुदायिक शैली के जीवन वाले ये युवा वैयक्तिक स्वतंत्रता को तरजीह देते हैं। ये युवा ज्यादा संतुलन और बेहतर स्वास्थ्य वाली जीवन शैली चाहते हैं। अपने और समाज के लिए और बेहतर व अनुकूल प्रॉडक्टस की डिमांड करते हैं। संपर्क एवं सुविधा के लिए इन युवाओं में ज्यादा ललक है। कुल मिलाकर ये युवा अपनी पिछली पीढ़ियों की तुलना में तकनीक, विज्ञान और समझ को लेकर बेहतर और तेजतर हैं इसलिए

इन्हें जेन एक्स या जेन वाय जैसे शब्द भी मिल चुके हैं। लेकिन इन आधुनिक खूबियों के बावजूद इसकी आलसी जल्दबाज और कम या न विचार करने वाली यानी दूर की न सोचने वाली पीढ़ी कहकर आलोचना भी होती रही है।

भारत में इस शब्द पर अब तक ज्यादा अध्ययन नहीं हुआ है, इसलिए बहुतों के लिए यह एक नई टर्म हो सकती है। दुनिया के कई हिस्सों में खासकर पश्चिम में मिलेनियल्स वाली अवधारणा पर काफी अध्ययन हो चुका है। इसलिए वहां की मिलेनियल्स आबादी को लेकर ज्यादा सुनने-पढ़ने को मिलता है। विकसित देशों में इस जेनरेशन में यह प्रवृत्ति देखी गई है कि ये परिवारों सामाजिक संस्कारों और जीवन के पुराने मूल्यों की कद्र नहीं करते। यह प्रवृत्ति भारत में भी धीरे-धीरे उभरने लगी है। इसके बावजूद भारतीय मिलेनियल्स के बारे में यह राय नहीं बनाई जा सकती। भारत की कुल आबादी का एक बड़ा हिस्सा इस श्रेणी में आता है।

विकसित देशों में इस जेनरेशन में यह प्रवृत्ति देखी गई है कि ये परिवारों सामाजिक संस्कारों और जीवन के पुराने मूल्यों की कद्र नहीं करते। यह प्रवृत्ति भारत में भी धीरे-धीरे उभरने लगी है। इसके बावजूद भारतीय मिलेनियल्स के बारे में यह राय नहीं बनाई जा सकती। भारत की कुल आबादी का एक बड़ा हिस्सा इस श्रेणी में आता है...

तकनीकी का अधिकतम उपयोग भले ही इसे पसंद हो, लेकिन सामाजिक मूल्यों से अभी भी यह गहरे तक जुड़ा हुआ है। दुनिया की तुलना में भारत की यह आबादी आलसी या गफलत की शिकार नहीं कही जा सकती। यहां माता-पिता अभिभावकों या बड़े-बुजुर्गों को लेकर मिलेनियल्स में एक चिंता और समझ के साथ उन्हें साथ लेकर चलने की सोच कायम है। इन्हें जिम्मेदारी का बखूबी एहसास है और मूल्यों की फिक्र है। इन मूल्यों के साथ ही तकनीक विज्ञान और कौशल के गुणों से भरपूर यह पीढ़ी ज्यादा ईमानदार और बेहतर व्यवस्था की पक्षधर दिखती है।

रेजिना लटरेल और कैरेन मैकग्रा लिखित दि मिलेनियल माइंडसेटस् ऐसी ही एक किताब है, जिसमें न सिर्फ इस पीढ़ी के कई लोगों, बल्कि पुरानी पीढ़ियों के कुछ लोगों से बातचीत कर दो जेनरेशन के बीच में एक आपसी समझ बनाने की दिशा में कोशिश की गई है। मिलेनियल शब्द को और गहराई से समझने के लिए इसी तरह का एक प्रयास भारत में भी हुआ है। सुब्रह्मण्यम एस कलापति ने दि मिलेनियल्स-एक्सप्लोरिंग दि वर्ल्ड ऑफ दि लारजेस्ट लिविंग जेनरेशनस् में इस दिशा में बहुत बढ़िया काम किया है।

मिलेनियल जेनरेशन ने हमारे जीवन, कामकाज के तौर-तरीकों और मूल्यों को प्रभावशाली ढंग से प्रभावित किया है। मिलेनियल्स शब्द सिर्फ एक पीढ़ी का नहीं, बल्कि एक पूरी सोच में परिवर्तन को इंगित करता है। भारतीय युवा अगर सांस्कृतिक एवं सामाजिक मूल्यों से जुड़ा रहकर तकनीकी विकास को अपनाएं तो इस वर्ग में देश को आगे ले जाने की अपार संभावनाएं हैं।

लेखक मीडिया शोद्यार्थी हैं।

चित्र : गूगल-ईमेज से साभार

खतरे की घंटी है टिकटॉक की फैंटेसी

चित्र : गूगल-ईमेज से साभार

टिकटॉक को लेकर अब तक के अनुभव से देखें तो यह मांग बहुत हद तक उचित जान पड़ती है। टिकटॉक ने युवाओं को न केवल अनुत्पादक कार्यों में लगाया है, बल्कि युवा मस्तिष्क को हिंसात्मक विचारों से भरने का कार्य भी किया है। तकनीकी कंपनियों के धड़ल्लेदार मार्केटिंग तिकड़मों से अनजान युवा वर्ग को यह पता भी नहीं चल पाता कि कब वे पॉर्नोग्राफी जैसी अनैतिक दुर्गुणों का शिकार हो जाते हैं...

❐ दिनेशा अत्रि

चाइनीज टिकटॉक ऐप खुद के अभिव्यक्ति का एक साधन होने का दावा करती रही है। हालांकि पिछले कई दिनों से यह अलग-अलग कारणों से विवादों में है। इसी क्रम में बहुत से बुद्धिजीवियों ने टिकटॉक को पूर्णता बंद करने की मांग की है। टिकटॉक को लेकर अब तक के अनुभव से देखें तो यह मांग बहुत हद तक उचित जान पड़ती है। टिकटॉक ने युवाओं को न केवल अनुत्पादक कार्यों में लगाया है, बल्कि युवा मस्तिष्क को हिंसात्मक विचारों से भरने का कार्य भी किया है। तकनीकी कंपनियों के धड़ल्लेदार मार्केटिंग तिकड़मों से अनजान युवा वर्ग को यह पता भी नहीं चल पाता कि कब वे पॉर्नोग्राफी जैसी अनैतिक दुर्गुणों का शिकार हो जाते हैं। टिकटॉक के विरोध में लिखने का यह अर्थ कभी भी नहीं कि हम मनोरंजन के ही खिलाफहैं। टिकटॉक जैसे मंच मनोरंजन के नाम पर जिस अनैतिकता को बढ़ावा दे रहे हैं, उसे मनोरंजन कैसे मान लिया जाए। इसी बीच समाज के कुछ जागरूक नागरिकों ने टिकटॉक के खिलाफ मोर्चा खोल दिया है, तो यह काफी हद तक सही प्रतीत होता है।

टिकटॉक पर विवादास्पद वीडियो पोस्ट करने पर राष्ट्रीय महिला आयोग की अध्यक्ष रेखा शर्मा ने भी टिकटॉक पर प्रतिबंध लगाने की मांग की है। उन्होंने ट्वीट करके आरोप लगाया कि मैं मजबूती के साथ टिकटॉक इंडिया को पूर्णतया प्रतिबंधित करने के पक्ष में हूं और इसके लिए वह भारत सरकार को भी लिखेंगी। यह न केवल आपत्तिजनक वीडियोज को बढ़ावा दे रहा है, बल्कि युवाओं को गैर-उत्पादक जीवन की ओर धकेल रहा है। यहां ये कुछ

फॉलोअर्ज के लिए जी रहे हैं और जब यही नंबर कम हो जाते हैं, तो मौत को भी गले लगा लेते हैं। हालांकि यह कोई पहला मौका नहीं है जब टिकटॉक को प्रतिबंधित करने की मांग उठी हो। नवंबर 2019 में हीना दरवेश ने मुंबई हाई कोर्ट में जनहित याचिका लगाई थी जिसमें कहा गया था कि यह ऐप अपराधों और मौतों का कारण बन रहा है। इसी बीच टिकटॉक पर पिछले साल मद्रास उच्च न्यायालय ले प्रतिबंध लगा दिया था, जिसे बाद में हटा लिया गया। 12 मार्च को अमेरिका में रिपब्लिकन सीनेटर जॉश हावले ने सीनेट में एक बिल पेश किया कि सभी फेडरल सरकारी उपकरणों पर चीनी सोशल मीडिया ऐप टिकटॉक को डाउनलोड व इस्तेमाल करने पर प्रतिबंध लगाया जाए, क्योंकि यह अमेरिकी सरकार की डाटा सुरक्षा पर एक जोखिम हो सकता है। इस तरह से यह भारत और दुनिया के दूसरे कई देशों में बार-बार सवालों के घेरे में आता रहा है।

कुछ समय पहले महाभारत के भीष्म पितामह मुकेश खन्ना ने भी टिकटॉक को बेकार बताया था। उन्होंने इस पर अश्लीलता फैलाने का भी आरोप लगाया था। मुकेश खन्ना ने यह भी कहा कि इस ऐप के उपयोग कर युवा नियंत्रण से बाहर हो रहा है। इंस्टाग्राम अकाउंट पर अपने विचार साझा करते हुए उन्होंने कहा था-

टिक टॉक टिक टॉक घड़ी में सुनना सुहावना लगता है। लेकिन आज की युवा पीढ़ी का घर मोहल्ले, सड़क-चौराहे पर चंद पलों का फेम पाने के लिए सुर-बेसुर में टिकटॉक करना बेहूदगी का पिटारा लगता है। कोरोना चायनीज वाइरस है। यह सब जान चुके हैं। पर टिकटॉक भी उसी बिरादरी का है, यह भी जानना जरूरी है। टिकटॉक फालतू लोगों का काम है। और यह उन्हें और भी फालतू बनाता चला जा रहा है। अश्लीलता, बेहूदगी, फूहड़ता घुसती चली जा रही है आज के युवाओं में इन बेकाबू बने वीडियोज के माध्यम से। इसका बंद होना जरूरी है। खुशी है मुझे कि इसे बाहर का रास्ता दिखाया जा रहा है। मैं इस मुहिम के साथ हूं।

टिकटॉक एक बार तब भी सुर्खियों में था जब फैजल सिद्दीकी का टिकटॉक अकाउंट सस्पेंड कर दिया गया था। इसके बाद उनके भाई आमिर सिद्दीकी का टिकटॉक अकाउंट भी सस्पेंड कर दिया गया था। आमिर सिद्दीकी के टिकटॉक अकाउंट सस्पेंड होने के पीछे कास्टिंग डायरेक्टर नूर सिद्दीकी की याचिका भी बताई जा रहा है। अब उनका टिकटॉक अकाउंट सस्पेंड कर दिया गया हैए जिसके 38 मिलियन यानी 38 लाख फॉलोअर्स हैं। आमिर ने यू-ट्यूब कम्युनिटी के खिलाफ एक वीडियो बनाया था, जिसके बाद से वो ज्यादा खबरों में थे। बता दें कि पहले टिकटॉक वर्सेस यू-ट्यूब का मामला आया। इसके बाद फैजल सिद्दीकी का वीडियो वायरल हुआ, जिस पर एसिड अटैक को बढ़ावा देने का आरोप लगा। इस आरोप के बाद सोशल मीडिया पर तमाम ऐसे वीडियो घूमने लगे जिन पर यौन हिंसा और जानवरों पर अत्याचार के आरोप लग रहे हैं।

इतनी आसानी से टिकटॉक के जाल में फंसने के पीछे एक बेहद सामान्य सा मनोविज्ञान कार्य कर रहा होता है। लंबे समय से बॉलीवुड ने युवाओं के मन में एक अजीबोगरीब फैंटेसी पैदा कर रखी है कि उनका लाइफ स्टाइल आम आदमी की तुलना में खास होता है। इसलिए बॉलीवुड की इस फैंटेसी से प्रभावित बहुत से भारतीय खासकर युवा खुद को सेलिब्रिटी के तौर पर देखना चाहते हैं। टिकटॉक इनैक्टमेंट के दौरान टिकटॉकर खुद को अभिनेता या अभिनेत्री के रूप में देखने लगता है। हालांकि यह भी सच है कि हर कोई बच्चा अभिनेता और अभिनेत्री नहीं बनने वाले। फिर क्यों उन्हें समय और ऊर्जा की बर्बादी से नहीं रोका जा रहा।

इन सब विवादों के बीच टिकटॉक ने एक पोस्ट किया है जिसमें उन्होंने कुछ स्पष्टीकरण दिया है, लेकिन इतने भर से बात बनने वाली नहीं। भारतीय समाज को अब समझना होगा कि अपने बहुमूल्य जीवन का अधिकतर समय टिकटॉक पर विडियोज बनाकर दूसरों का मनोरंजन करने के लिए आप लोग क्यों खुद को साधन बना रहे हैं, कायदे से तो माता-पिता को अपने बच्चों को ऐसे अनुत्पादक कामों में न उलझने से समझाना चाहिए, लेकिन बहुत से मां-बाप स्वयं बच्चों के साथ मिलकर विडियोज बना रहे हैं। ऐसे मां-बाप अपने बच्चों से क्या उम्मीद रख सकते हैं?

अगर हम अपनी आने वाली पीढ़ी को मानसिक एवं शारीरिक रूप से स्वस्थ बनाना चाहते हैं, तो उन्हें इन सब फूहड़ कार्यों से हटाकर रचनात्मक एवं उत्पादक कार्यों में लगाना होगा।

इसमें बहुत से कार्य हो सकते हैं, जैसे समाजसेवा, स्वाध्याय, देशभक्ति और नैतिक मूल्यों से अवगत करवाना। हमारे मार्गदर्शक शास्त्र भी इसी बात पर बल देते हुए व्याख्या करते हैं। सद्भिरेव सहासीत सद्भिरकुर्वीत सङ्गतिम्।

लेखिका लंबे समय से सोशल मीडिया का अध्ययन कर रही हैं।

इतनी आसानी से टिकटॉक के जाल में फंसने के पीछे एक बेहद सामान्य सा मनोविज्ञान कार्य कर रहा होता है। लंबे समय से बॉलीवुड ने युवाओं के मन में एक अजीबोगरीब फैंटेसी पैदा कर रखी है कि उनका लाइफ स्टाइल आम आदमी की तुलना में खास होता है। इसलिए बॉलीवुड की इस फैंटेसी से प्रभावित बहुत से भारतीय खासकर युवा खुद को सेलिब्रिटी के तौर पर देखना चाहते हैं। टिकटॉक इनैक्टमेंट के दौरान टिकटॉकर खुद को अभिनेता या अभिनेत्री के रूप में देखने लगता है...

समय रहते संभावित संकट की सटीक सूचना पाकर सरकार ने आवश्यक कदम उठा लिए और उसी का नतीजा है कि भारत ने कोरोना को अपने यहां अब तक बे-लगाम नहीं होने दिया...

Aarogya Setu

मैं सुरक्षित | हम सुरक्षित | भारत सुरक्षित

सही सूचनाओं का आरोग्य सेतु

❐ रविन्द्र सिंह भड़वाल

कोरोना संकट के समय आरोग्य सेतु ऐप ने शासन-प्रशासन से लेकर आमजन के मध्य संवाद के महत्वपूर्ण सेतु खड़े किए हैं। इसी ऐप के जरिए सरकार को सही समय पर करीब साढ़े छह सौ हॉट-स्पॉट्स की सटीक जानकारी मिली। समय रहते संभावित संकट की सटीक सूचना पाकर सरकार ने आवश्यक कदम उठा लिए और उसी का नतीजा है कि भारत ने कोरोना को अपने यहां अब तक बे-लगाम नहीं होने दिया। भारत अब भी अमेरिका, इटली, स्पेन, चीन, ब्रिटेन, रूस और ब्राजील जैसे संसाधन संपन्न देशों की अपेक्षा कोरोना के खिलाफ ज्यादा कारगर ढंग से लड़ाई लड़ पाया है।

इस प्रकार सही समय पर सरकार और लोगों में आवश्यक सूचनाएं पहुंचाकर आरोग्य सेतु ऐप ने कोरोना के खिलाफ लड़ाई में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

भारत सरकार ने कोरोना संक्रमितों को ट्रैक करने के लिए अप्रैल की शुरुआत में आरोग्य सेतु मोबाइल ऐप को लॉन्च किया था। लॉन्च होने के कुछ ही दिन में इस ऐप ने सबसे ज्यादा डाउनलोड होने का मुकाम हासिल किया था। 12 मई तक इस ऐप को 10 करोड़ स्मार्टफोन उपभोक्ता डाउनलोड कर चुके थे।

नीति आयोग के सीईओ अमिताभ कांत ने दावा किया है कि कोरोना वायरस के संक्रमण से बचाव संबंधी जानकारी देने के लिए सरकार द्वारा जारी आरोग्य सेतु ऐप दुनिया में सबसे अधिक डाउनलोड होने वाला स्वास्थ्य सेवा ऐप बन गया है। इसकी लोकप्रियता और कार्यप्रणाली से प्रभावित होकर विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भी जल्द ही आरोग्य सेतु जैसा ऐप लॉन्च करने की बात कही थी, जिसमें वो सारी तकनीकी खासियतें होंगी, जो आरोग्य सेतु में हैं। भारत के अलावा फिलहाल ऑस्ट्रेलिया और यूनाइटेड किंगडम अपना खुद का वायरस को ट्रेक करने वाला ऐप लॉन्च कर चुके हैं।

इस तरह भारत सरकार ने कोरोना के खिलाफ अपनी अब तक की लड़ाई में जो सबसे कारगर कदम उठाए हैं, उनमें आरोग्य सेतु ऐप भी शामिल है।

इस ऐप के प्रति लोगों में अविश्वास की भावना पैदा न हो, इसके लिए केंद्रीय संचार एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्री रविशंकर प्रसाद ने आरोग्य सेतु ऐप को निजी ऑपरेटर को आउटसोर्स किए जाने को खारिज करते हुए कहा कि इसमें डाटा सुरक्षा की ठोस व्यवस्था है। केंद्रीय मंत्री ने अपने ट्वीट में कहा कि इस ऐप की दुनिया भर में सराहना की जा रही है, जिसे सरकार ने कोरोना वायरस से लड़ाई में एक महत्वपूर्ण हथियार बताया है।

लेखक मीडिया शोद्यार्थी हैं।